परामर्श समिति :

श्री अगरचन्द नाहटा

डॉ कन्हैयालाल सहल

प्रो नरोत्तम स्वामी

डॉ मोतीलाल मेनारिया

श्री सीताराम लालस

श्री उदयराज उज्ज्वल

श्री गोवर्धनलाल काबरा

श्री विजयसिंह सिरियारी

परम्परा

राठौड़ रतनसिंघ री वेलि

श्रीमान फतेलालजी मीचन्दजी गोलेछा
जयपुर वालों की ओर से भेंट ॥

संपादक

नारायणसिंह भाटी

● श्री आचार्य विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार ●
जयपुर

प्रकाशक

राजस्थानी शोध संस्थान

जोधपुर

प्रकाशक
राजस्थानी शोध संस्थान
जोधपुर

परम्परा – भाग १४

मूल्य – ३ ४

मुद्रक
हरिप्रसाद पारीक
साधना प्रेस
जोधपुर

विषय-सूची

परिशिष्ट

Rajasthani literature is nothing but a message of brave flooded life and a brave stormy death.

It was in these songs that foaming Streams of infallible energy and in domitable iron courage had flown and made the Rajput warrior forget all his personal comforts and attachments in fight for what was true good and beautiful.

Dr Suniti Kumar Chatterji

सम्पादकीय

राजस्थानी वीररसात्मक साहित्य प्रबंध-काव्यों वेलियों स्फुट दोहों गीत छप्पय झूलणा आदि छन्दों के माध्यम से व्यक्त हुआ है। इन सभी विधाओं में वेलियों का अपना विशिष्ट स्थान है। प्राचीन राजस्थानी में लोक-हित के लिये प्राणोत्सर्ग करने वाले वीरों और देवताओं के तुल्य वन्दनीय महापुरुषों की चारित्रिक विशेषताओं तथा उनके आदर्श कार्यों को लेकर अनेकों वेलियां लिखी गई हैं। डिंगल के प्रसिद्ध ग्रंथ राठौड़ पृथ्वीराज रचित 'वेलि क्रिसन रुकमणि री' से पहले भी अनेक सुन्दर वेलियों का निर्माण हुआ है उनमें राठौड़ रतनसिंह की वेलि भी एक है। यह काव्य-कृति भाव और भाषा की दृष्टि से इतनी प्रौढ़ और ओजपूर्ण है कि १७वीं शताब्दी की वीररसात्मक रचनाओं में इसे निस्संदेह एक क्लासिक रचना कहा जा सकता है।

डिंगल की वीररसात्मक काव्य-परम्परा मे अनेकों रूढ़ियों का निर्वाह देखने को मिलता है और प्राय सभी कवि किसी न किसी रूप में उन रूढ़ियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रहे हैं। यथा—युद्ध एक महान पर्व है उसमे भाग लेना प्रत्येक बहादुर व्यक्ति का कर्त्तव्य है युद्ध में मृत्यु को प्राप्त होने वाला व्यक्ति मोक्ष को प्राप्त होता है युद्ध से भाग जाना अपने कुल को कलंकित करना है और युद्ध में बहादुरी से लड़ना अपने कुल की कीर्ति को बढ़ाना है। युद्ध में काम आने वाले बहादुर योद्धा का वरण करने के लिये अप्सरायें लालायित रहती हैं। वे स्वय अपना वर चुनने के लिये स्वर्ग से उतर आती हैं। युद्ध एक योद्धा के लिये विवाह की तरह है जहां वह दूल्हे का वेष धारण कर सेना रूपी कुमारी से विवाह करने के लिए पूरी साज-सज्जा से जाता है और पाणिग्रहण के पश्चात् उसका उपभोग करता है। इन सभी रूढ़ियों का अत्यंत सजीव एव विस्तारपूर्वक वर्णन प्रस्तुत वेलि में देखने को मिलता है। पूरी वेलि में कुशल कवि ने युद्ध का रूपक विवाह के साथ बांधा है। कुछेक द्वालों

में कवि ने केवल युद्ध का वर्णन कर के रूपक का संकेत मात्र देकर ही संतोष कर लिया है पर अधिकांश द्वालों मे रूपक का निर्वाह बड़ी सहृदता के साथ किया गया है—

रोस कसीस चुमंती रमती।
चुंवती मवन महा रस चोळ।
द्धामी बड़ मीसांण दुबाए।
रिण पावर करि मेवर रोळ॥

केवल ७२ द्वालों की इस छोटी सी कृति मे वीर रस के अतिरिक्त शृंगार वीभत्स भयानक और रौद्र रस का भी परिपाक कवि ने सहायक रसों के रूप में किया है। अपना इस कविगत उच्च कोटि की वर्णन सम्बन्धी विशेषताओं के कारण ही डॉ टैसीटरी ने इस के महत्व को इन शब्दों में प्रदर्शित किया है—A small but valuable poem in 66 veliya gitas by an author unknown, in honour of Ratan Si the Udavata Rathore Chief of Jetarana. The poem commemorates Ratan Si s courage in facing an imperial force which had been despatched against him and the glorious death he met in th battle Throughout the poem author has developed the simile of the hero who like a bridegroom goes to spouse the enemy army a simile common in bardic poetry

सम्पूर्ण युद्ध-वर्णन में रूपक के कारण आने वाली चूदी के फलस्वरूप कविता पुनरुक्ति दोष तथा इतिवृत्तात्मकता से बच गई है यद्यपि अतिरंजनापूर्ण वर्णन इसमें भी है। कवि ने युद्ध के वर्णन में विवाह की अनेकों रस्मों का इस बारीकी के साथ वर्णन किया है कि पाठक की कल्पना-शक्ति युद्ध और विवाह दोनों ही वातावरण मे विचरण करती हुई अनूठे भावालोक में पहुँच जाती है यथ —

उतकर वर मेहुत उतारै।
धावन रतन हाथ वरै।
फारक श्रांहमी सांहमी फेरै।
हुव हैकप बीमाह हुवै॥ १८

चित्रोपमता इस कविता का मुख्य गुण है। वर्णन में इतनी सजीवता है और शब्दों का ऐसा समुचित प्रयोग किया गया है कि प्रत्येक द्वाला अपने आप में एक चित्र प्रस्तुत करने मे समर्थ है। इस प्रकार पूरी कविता चित्रों के एक

A descriptiv Catalogue of Bardic and Historical M.S.S P rt I Page 70.

एलबम के समान है जिसमें एक भावात्मक सारसम्य है और जो वण्य-विषय की एकता के सूत्र से बंधा हुआ है। युद्ध में रतनसिंह की त्वरा का एक चित्र देखिये—

> काबिस कोट लगो विध कांमगि।
> धाए धूम सिखारि धुरै।
> फिर फिर अफिर रतनसी फुरळ।
> पीठ अपूठ फेरि फिरै॥
>
> *
>
> फरी अफिरि फिरगीसी फरी।
> बीर रतनमी बांथ बह।
> बक धुगी फुरळी भी फरळो।
> बेर मिठी सुरतान मह॥

पूरी कविता वेलियो-गीत छंद में लिखी हुई है यद्यपि कहीं कहीं मात्राओं में असमानता आ गई है। वयणसगाई का निर्वाह प्राचीन राजस्थानी साहित्य की बहुत बड़ी विशेषता है। वयणसगाई में जो ध्वनि-साम्य का निर्वाह किया जाता है वह कविता पाठ में विशेष प्रकार की रोचकता ले आता है तथा कविता को याद करने में भी इससे बड़ी सहूलियत होती है। कई बार संपादन करने में भी इस नियम से बड़ी मदद मिलती है। इस काव्य में भी आदि से लेकर अंत तक वयणसगाई का बड़ी खूबी के साथ निर्वाह किया गया है। कविता की भाषा ठेठ डिंगल है। इसमें कुछ अरबी व फारसी के शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। भाषा इसकी प्रौढ़ और भावानुरूप है कि इस दृष्टि से इसे डिंगल की प्रथम श्रेणी की किसी भी रचना के समकक्ष रखा जा सकता है। कवि शब्दों के वजन और उनकी खूबियों का ऐसा पारखी है कि एक भी शब्द के औचित्य में सन्देह करने की गुंजाइश निकालना कठिन हो जाता है।

इस रचना के निर्माण १७वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ है अतः इस काल तक व्याप्त पुरानी पश्चिमी राजस्थानी की भाषागत विशेषताओं को भी इस कविता में स्थान-स्थान पर देखा जा सकता है। उस प्राचीन राजस्थानी और मध्यकालीन राजस्थानी के बीच की कड़ी होने के कारण यह रचना भाषा शास्त्र की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

इस रचना के नायक रतनसिंह राव सीहाजी की १२वीं पीढ़ी में होने वाले राव ऊदा के पौत्र थे। ऊदा बहुत प्रभावशाली एवं प्रसिद्ध योद्धा हुए

इसलिये उनके वंशज ऊदावत कहलाये। सहूलियत के लिये उनका वंश-वृक्ष यहां दिया जाता है।

वंश वृक्ष

राव सीहजी
|
राव आसथानजी
|
राव धूहड़जी
|
राव रायपालजी
|
राव कन्हपालजी
|
राव जालणसीजी
|
राव छाडाजी
|
राव तीडाजी
|
राव सलखाजी
|
राव वीरमजी
|
राव चूंडाजी
|
राव रिड़मलजी
|
राव जोधाजी

राव सातलजी — राव सूजाजी

(राव सूजाजी के वंशज:)
राव गांगाजी (जोधपुर)
राव ऊदाजी (जैतारण)
|
राव खींवकर्णजी
|
राव रतनसीजी
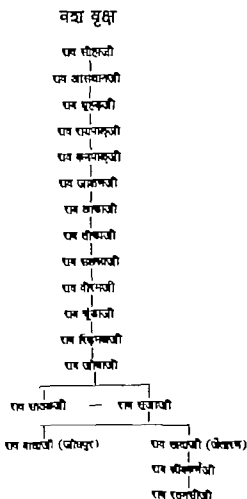
प्राचीन युग में बड़े परगनों के जागीरदार रियासत के राजा के अधीन होते हुए भी अपना स्वतंत्र-सा अस्तित्व भी रखते थे और अपनी ताकत के बूते पर स्वतंत्र रूप से संधि-विग्रह में भाग ले लिया करते थे। जैतारण के जागीरदारों की भी कुछ ऐसी स्थिति थी। ये अपनी बहादुरी और क्षत्रियत्व के लिये प्रसिद्ध थे।

जैसा कि कविता से ही स्पष्ट है राव रतनसिंह का युद्ध अकबर की सेना

से हुआ था और वह सेना अजमेर के सूबेदार हाजी खां के भाग जाने पर जैतारण आई थी। इस घटना का वर्णन पुरानी ख्यातों में भी मिलता है और रामकरणजी आसोपा गौरीशंकर हीराचंद ओझा आदि विद्वानों ने भी इस तथ्य पर प्रकाश डाला है पर समय आदि को लेकर इनमें मतभेद हैं।

ओझाजी का मत है कि सं १६१५ में बादशाह अकबर जब लाहोर से लौटता हुआ सतलज पार कर लुधियाना के पास ठहरा हुआ था तो उसने हाजी खां को परास्त करने के लिये सेना भेजी और हाजी खां गुजरात की तरफ भाग गया। उन्हीं दिनों शाहकुली खां के साथ जैतारण पर सेना भेजी गई। इस सेना में (मारवाड़ की ख्यात के अनुसार) राजा भारमल जगमाल पृथ्वीराज राठौड़ जयमल, ईश्वर वीरमदेवोत भी शामिल थे। जैतारण के हाकिम ने मालदेव को सहायता के लिये लिखा था पर उसने सहायता नहीं भेजी जिससे राठौड़ रतनसिंह खींवावत राठौड़ किशनसिंह जगसिंहोत आदि काम आये।

रामकरण जी आसोपा 'मारवाड़ के इतिहास' में लिखते हैं कि वि सं० १६१४ में अजमेर का सूबेदार कासिम खां जैतारण पर चढ़ आया। उस समय इन्होंने राव मालदेजी से सहायता मांगी थी परन्तु राव मालदेवजी की तरफ से सहायता नहीं मिली। मुसलमानों की सेना बहुत अधिक थी तथापि उन्होंने उसकी परवाह न कर के बड़ी वीरता स मुकाबला किया और कई शत्रुओं को मार गिराया। वहां सूबेदार के हाथ का तीर इनके मस्तक में लगा और उसी से वि० सं १६१४ की चैत वदि १ को इनका स्वर्गवास हो गया।

आसोपाजी ने इस युद्ध और रतनसिंह की मृत्यु का जो संवत १६१४ निश्चित किया है वह सही है क्योंकि इसकी साखी जैतारण में बने रतनसिंह के स्मारक-मंडप के शिलालेख में भी मिलती है। इस जीर्ण मंडप के शिलालेख पर लिखा है—'सम्वत् १६१४ वर्षे चैत वदि १० राजा रतनसिंहजी राठौड़·····गांगो करमसोत—अकबर की फौज सू राड़ कीवी। इस काव्य के रचयिता का नाम एक प्रति में दूदो विसराम मिलता है पर इस कवि के सम्बन्ध में अन्य कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती और न इनके नाम की कोई रचना ही प्राचीन राजस्थानी ग्रंथों म देखने को मिलती है। भाषा की प्राचीनता और

जोधपुर राज्य का इतिहास (ओझा) प्रथम खंड पृष्ठ ११

इतिहास मारवाड़ पृष्ठ ४८

युद्ध का सजीव चित्रण करते हुए यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि कवि रतनसिंह का समकालीन था और यह काव्य रचना १६१४ ९५ के लगभग की होनी चाहिए।

प्रस्तुत वेलि में स्थान-स्थान पर चित्तौड़ का भी नाम आया है।¹ इससे ऐसा प्रतीत होता है कि रतनसिंह से युद्ध के समय या उसके कुछ पहले इसी सेना का मुकाबला चित्तौड़ की फौज से भी होना चाहिए अन्यथा चित्तौड़ का यहां जिक्र आने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। इतिहासकार इस सम्बन्ध में मौन हैं।

इस वेलि की तरह ही अनेक लघु रचनाएँ १७ वीं तथा १८ वीं शताब्दी में भूलणा छप्पय दोहा वेलियो आदि छंदों के रूप में रची गई हैं जिनका भाषा साहित्य और इतिहास की दृष्टि से बड़ा महत्त्व है। इसी दृष्टि से राठौड़ रतनसिंह पर लिखे हुए कुछ अन्य गीतों को भी हमने शब्दार्थ सहित परिशिष्ट में प्रकाशित कर दिया है।

प्रस्तुत वेलि की बहुत कम प्राचीन प्रतिलिपियां उपलब्ध होती हैं। कुछ वर्ष पहले ठाकुर ईश्वरसिंह जी के ग्रंथ में से मैंने इस रचना की नकल की थी। उसका लिपि-काल १७ वीं शताब्दी का अंतिम समय है। उसी के आधार पर इसका सम्पादन किया गया है। प्रति का पाठ शुद्ध करने में 'अनूप संस्कृत लाइब्रेरी' बीकानेर के हस्तलिखित ग्रंथ नं ९२ से भी सहायता ली गई है और उसका उपयोग पाठान्तर के रूप में किया गया है। अनूप संस्कृत लाइब्रेरी की प्रति नं ९८ में भी ७ छंदों की यह वेलि है पर प्रति जीर्ण होने से उसका उपयोग नहीं किया जा सका।

परिशिष्ट में वीररसात्मक वेलि साहित्य सम्बन्धी एक लेख और राजस्थानी वेलि साहित्य की सूची भी इस दिशा में कार्य करने वाले शोधकर्त्ताओं की सुविधा के लिये प्रकाशित की गई है। जिन महानुभावों के सौजन्य से मुझे इस महत्त्व पूर्ण काव्य-कृति की प्रतियां मिली हैं और जिन्होंने इस अंक को उपयोगी बनाने में सहयोग दिया है उनका मैं आभार स्वीकार करता हूं।

—नारायणसिंह भाटी

---

¹ छंद सं —१२, १३, १६

राठोड़ रतनसिंघ री वेलि

सुप्रसन होय सांमण' सारदा ।
विमळ सर' भाखर द्य वयण ।
कळिजुग रुखमांगद राव कमधज ।
राजा वाखांणीसि रयण ॥ १

शब्दार्थ— सुप्रसन – सुप्रसन्न सांमण – स्वामिनी सारदा – शारदा विमळ – विमल सर – श्रेष्ठ प्रशंसायुक्त, द्य – दीजिये वयण – वाणी वचन कळिजुग – कलियुग रुखमांगद – रुक्मांगद एक धर्मपरायण राजा कमधज – राठौड़ वाखांणीसि – वर्णन करूं रयण – रतनसिंह [सं रत्न प्रा रयण रा रयण]

भावार्थ— हे सरस्वती ! तू प्रसन्न होकर मुझे श्रेष्ठ वाणी प्रदान कर जिससे मैं कलियुग के रुक्मांगद राठौड़ राजा रतनसिंह का बखान करूं ।

विशेष— प्राचीन धर्म-ग्रंथों में रुक्मांगद नाम के राजा का जिक्र मिलता है जो बड़ा धर्मात्मा दानी और ईश्वर का भक्त था । इस काव्य के नायक राठौड़ रतनसिंह को कलियुग का रुक्मांगद कह कर कवि ने उसकी वीरता के साथ-साथ अन्य चारित्रिक विशेषताओं की ओर भी संकेत किया ।

भांति अनामति[1] देह भवानी ।
भणिजै भल गुण सुजस भणू[2] ।
रिण चाचर[3] परणीजै रतनौ ।
तुंग बखाणू खेम तणू ॥ २

शब्दार्थ— अनामति – कुशलता देह – देमो भवानी – भवानी भणिजै – वर्णन करू भल गुण – अच्छे गुण सुजस – सुयश भण – वर्णन करू रिण चाचर – युद्ध भूमि परणीजै – विवाह करता है रतनौ – रतनसिंह तुंग – सेना बखाणू – प्रशंसा करता हूँ खेम तण – खींवसिंह का पुत्र ।

भावार्थ— हे भवानी ! मुझे एसी कुशलता दे जिससे मैं नायक के अच्छे गुणों और सुयश का वर्णन करू । युद्ध-भूमि में जो राठौड़ रतनसिंह विवाह कर रहा है उस खींमसिंह के पुत्र के सैन्य दल का भी बखान करू ।

विशेष— 'खेम तणू' खेम तनय—खींवसिंह का पुत्र । यहां के साहित्य में पिता के नाम के बाद में तणो रो वाळी आदि शब्दों का प्रयोग कर के नायक के पिता या पूर्वज का नामोल्लेख उसकी वंश-परम्परा की ओर संकेत करने के आशय से किये जाते हैं । ऐसे स्थलों को समझने के लिए इतिहास की पूरी जानकारी अपेक्षित है ।

अनाइति भणां वेगि भल गुण सुजस भण बाचरि तुंग बखाणिस खेम तण ।

पवित्र प्रयाग[1] रतनसि पोहकर ।
मन निरमळ गगाजळ जेम ।
नर नादेत नरिंद नरेहूण[2] ।
निकळ निघुट[3] निपाप निगेम ।। ३

शब्दार्थ— रतनसि – रतनसिंह निरमळ – निर्मल गंगाजळ – गंगाजल जेम – जैसा नादेत – जो असुर प्रवृत्ति का नहीं है नरिंद – नरेन्द्र राजा नरेहूण – उज्ज्वल जिस पर किसी प्रकार का धब्बा न हो निकळ – निष्कलंक निघुट – दृढ़ निगेम – पापरहित ।

भावार्थ— रतनसिंह प्रयाग तथा पुष्कर जैसे तीर्थ-स्थानों की तरह पवित्र है । उसका मन गगाजल के समान निर्मल है । वह आसुरी वृत्तियों से मुक्त निष्कलक दृढ़-निश्चयी और सभी प्रकार के पापों से मुक्त है ।

विशेष— यहां कवि ने सभी प्रकार से नायक के चरित्र के उज्ज्वल पक्ष को प्रदर्शित किया है । नरेहूण' शब्द का सामान्य अर्थ कलंकरहित होता है पर राजस्थान के जन-जीवन में इसका प्रयोग विशेष तौर से ऐसे व्यक्ति के लिए विशेषण के रूप में किया जाता है जो सभी प्रकार की मानवीय कमजोरियों से ऊपर हो और जिस पर कोई लांछन न लगा हो ।

---

[1]पवित्त पिराग [2]नरोहण निघट ।

मावल खड[1] हुता कुमारी।
घर घर[2] हांडी मीर घड।
समहर सारीखै सारीखौ[3]।
वर कोइ न लहै[4] आप वड॥ ४

शब्दार्थ— काबल खंड – काबुल देश हुता – थे हांडी मीर – हांडीहमीर, कायर, पेटू घड – फौज समहर – समर (कामदेव) युद्ध सारीखै सारीखौ – बराबरी का न लहै – प्राप्त नहीं हुआ आप वड – अपने समान ताकतवर।

भावार्थ— काबुल देश की कुमारी (सेना) को घर-घर कायर और कमजोर व्यक्ति ही मिले। काम (समर) में उसकी बराबरी करने वाला उसके समान वर प्राप्त नहीं हुआ।

विशेष— राजस्थानी में 'हांडी हमीर' शब्द कायर और पेटू व्यक्ति के लिये आज भी प्रयुक्त होता है। उसी का रूप 'हांडी मीर' यहां प्रयुक्त हुआ है। 'समहर' शब्द कामदेव (समर) तथा युद्ध दोनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ है क्योंकि कवि आगे भी सेना को कुमारी रतनसिंह को वर और युद्ध को विवाह तथा रति-क्रीड़ा आदि के रूप में प्रस्तुत कर रहा है।

काबलि छड [2]घरि घरि हांडी समिहरि सारिखेइ सारीखउ [5]लहइ।

जोगणपुरी मयण तण जोवण[1]।
वर प्रापत[2] गहि पूरत[3] वेस।
परणै[4] जिको चढ़ी[5] तै परणण।
नय सह हिंदू तुरक नरेस॥ ५

शब्दार्थ— जोगणपुरी – दिल्ली मयण – मदन तण – तन जोवण – यौवन प्रापत – प्राप्त पूरत – पूर्ण वेस – वयस परणै – विवाह करे, जिको – जो भी परणण – विवाह करने के लिये नरेस – नरेश राजा।

भावार्थ— युवा तन में काम का प्रवेश होने पर वर प्राप्ति के उपयुक्त उम्र वाली कुमारी (सेना) नौ खण्डों में जो भी विवाह करने को तैयार हो उससे विवाह करने के लिये दिल्ली से चढ़ी।

विशेष— यहां जोगणपुरी (योगिनीपुर) शब्द दिल्ली के लिए विशेष अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। दिल्ली को कवि ने रणचंडी के रूप में देखा है क्योंकि उसी की वजह से कितने ही योद्धाओं का संहार हुआ है। इसी भाव को व्यक्त करने के लिये चण्डीपुर जगतीपुर जगतांगढ़ आदि शब्द डिंगल गीतों में भी इसके लिये प्रयुक्त हुए हैं।

---

[1] जोबन वय [2] प्राप्ति [3] पूरति [4] परणण [5] चढ़ही।

रोस कसीय[1] घुमती रमती ।
घुंमती मदन महारस चौळ ।
हालै घड नीसांण हुवाए ।
रिण पाखर करि नेवर रौळ ।। ६

शब्दार्थ— रोस – आवेश उमंग कसीय – कसी हुई, सुसज्जित घुमंती – मस्ती में घूमती हुई, रमती – क्रीड़ा करती हुई घुंमती – परवांक कांति प्रकट करती हुई मदन – कामदेव महारस चौळ – रस की तरंग हालै – चलती है घड़ – सेना नीसांण – वाद्य-विशेष हुवाए – बजा कर, रिण – रण पाखर – घोड़े और हाथियों का कवच भूल नेवर – नूपुर रौळ – ध्वनि ।

भावार्थ— यौवन के आवेश में मस्ती से घूमती हुई और क्रीड़ा करती हुई सेना रूपी कुमारी काम के रस की कान्ति को प्रकट करती हुई गाजे बाजे के साथ रण-क्षेत्र में चली आ रही है । हाथी और घोड़ों के कवचों की ध्वनि ही उस सेना रूपी कुमारी के नूपुर की ध्वनि है ।

विशेष— यहां हाथियों और घोड़ों के कवचों (भूलों) से उत्पन्न ध्वनि को कवि ने सेना रूपी नायिका के नूपुर की ध्वनि कहा है । कवचों के साथ कई प्रकार की छोटी-बड़ी कड़ियां लगी रहती हैं जिनके हिलने से विशेष प्रकार की ध्वनि होती रहती है इसीलिए कवि ने उनकी तुलना नूपुर से की है ।

---

[1] उमाय हाली ।

घ्रूसम[1] घ्रूस जागिये घ्रुवत[2]।
चित अकबर दळ वेल चढ़ै।
मद उदमाद विरह गहमाती।
खांन वरेवा सयग खड़ै॥ ७

शब्दार्थ— घ्रूसम घ्रूस – जोरों से जागिये – ढोल घ्रुवतें – बजते हुए, चित – चित्त दळ – सेना वेल चढ़ै – तरुणयुक्त होती है मद – मस्ती उदमाद – उमंग गहमाती – उन्मत्त खांन – हाजीखान अजमेर का सूबेदार सयंग – घोड़े खड़ै – हांकती है।

भावार्थ— जोर-शोर से बजते हुए ढोलों से अकबर की फौज (कुमारी) के चित्त में तरंगें उठ रही हैं। वह सेना रूपी कुमारी यौवन की मस्ती म उमंगें भरती हुई हाजीखान से विवाह करने के लिए अश्व हांक रही है।

विशेष— अकबर ने अजमेर क सूबेदार हाजीखान के खिलाफ यह सेना भेजी थी पर हाजीखान उसका मुकाबिला नहीं कर सका और वह भाग गया। इसके बाद यही सेना जैतारण पहुंची वहां उसक साथ राठौड़ रतनसिंह से मुठभेड़ हुई।

---

[1]घुसम घुस [2]चिवतै सेग चढ़ै।

हयमर गति गयमर[1] गति गहगति[2] ।
घूंघट घाट रचे घण घेर ।
ऊपहि[3] रूप खेहाडम्बर[4] ।
अम्बर घड आवी अजमेर ।। ८

शब्दार्थ—हयमर – हयवर घोड़ा गयमर – गजवर. हाथी गहगति – गर्वपूर्ण चाल घाट – रचना घण घेर – कई घेरों वाला ऊपहि – उठी खेहाडंबर – आकाश में आच्छादित होने वाली धूल घड – सेना आवी – आई ।

भावार्थ— घोड़े और हाथियों की गर्वपूर्ण गति से सेना रूपी कुमारी बड़े घेर वाला घूंघट डाले अजमेर चली आ रही है । उसके चलने से उड़ने वाली धूलि से आकाश आच्छादित हो गया है ।

विशेष— सेना के अनेक घेरों को कवि ने यहां सेना रूपी कुमारी के 'घूंघट के घेरों' के समान बताया है । 'खेहाडबर' के पहले तीसरी पंक्ति में 'रूप' शब्द आया है जिसको यदि विशेष अर्थ में ग्रहण किया जाय तो आकाश में आच्छादित होने वाली वह धूलि उस कुमारी (सेना) के सौन्दर्य और आडम्बर को व्यक्त करने वाली है ।

---

[1]घर गैवर घड़ंवर किये [2]ओपहि [3]किये आडंबर आई ।

लगन कळह लिखी विह निसीयौ ।
आलम घड़ देखे असमांन ।
वींदपणौ अजमेर विसारे ।
खिसियौ लसियौ हाजीखांन ॥ ९

शब्दार्थ— लगन – विवाह लग्न दिली – दिल्ली विह – विधाता (अकबर) लिखियौ – लिखा आलम – बादशाह असमांन – आकाश वींदपणौ – दूल्हापन विसारे – भूल कर खिसियौ – खिसक गया लसियौ – कायरपन प्रकट कर के।

भावार्थ— दिल्ली के विधाता (बादशाह अकबर) ने विवाह (युद्ध) का लग्न लिख दिया। बादशाह की फौज रूपी कुमारी आकाश की ओर ताकती हुई आगे बढ़ी। जिस अजमेर के सूबेदार हाजीखान को वरण करने के लिये यह फौज रूपी कुमारी रवाना हुई थी वह दूल्हा कायरपन बता कर वहां से खिसक गया।

विशेष— बादशाह अकबर ने ही हाजीखान के खिलाफ में यह फौज भेजी थी अतः कवि ने लग्न निश्चित करने वाला विधाता बादशाह को बताया है। यह लग्न युद्ध रूपी विवाह का लग्न था इसीलिये कवि ने लग्न के साथ 'कळह' शब्द का प्रयोग किया है।

लिखिया लिहियौ।

हय हयकप कप मन हाजन।
उद्रक द्रर्मक धर्मक उर।
मीर घड़ा कुमारी मांड[1]।
प्रणपरणी मसीमो[2] प्रसुर॥ १०

शब्दार्थ— हयकंप – हल्ला-गुल्ला हाजन – हाजीखान उद्रक – डर द्रमंक – नगारों की आवाज मीर घड़ा – यवन सेना मांड – विवाह-मंडप प्रणपरणी – अविवाहित मसीयो – भग गया प्रसुर – हाजीखान।

भावार्थ— सेना का हल्ला-गुल्ला सुन कर हाजीखान का मन कांपने लगा। नगारों की गड़गड़ाहट से डर कर वह धमक उठा। यवन सेना रूपी कुमारी मंडप में अपना अखंड कौमार्य लिये खड़ी रही और उससे विवाह किये बिना ही वह यवन भाग गया।

विशेष— शादी की रस्म के अवसर पर लड़की के पक्ष वाले लोगों के लिये 'मांड' या 'मांडो' शब्द प्रयुक्त होता है तथा दूल्हे के पक्ष के लोगों के लिये 'जांन' या 'जांनीवासो' शब्द काम में लिये जाते हैं। 'मांड' शब्द संस्कृत के 'मंडप' शब्द का अपभ्रंश है। लड़की के घर वाले विवाह मंडप तैयार करवाते हैं इसलिये यह शब्द इस अर्थ में भी रूढ़ हो गया है।

---

[1] पाठान्तर मांडिहर [2] खिमियो।

जुडणण जोडण नांमा जोड़ी ।
नारि नवी निवतरौ' नाह ।
घाये खांन हजन खाफरघड़ ।
वीरति सिरजीयौ वीमाह ।। ११

शब्दार्थ — जुडणश – मिलान मिलना नांमा जोड़ी – नाम की राशियों का मेल नवी–पूर्ण युवा निवतैरौ – हल्का हलकी उम्र का नाह – पति घाये – पीड़ित खाफरघड़ – मुस्लिम सेना वीरति – वीरता सिरजीयौ – रचा वीमाह–विवाह ।

भावार्थ— दोनों नामों की राशियों का मिलान किया (मुठभेड़ हुई) तो कुमारी (सेना) तो पूर्ण युवा थी और वर उससे हल्का (हलकी उम्र का) निकला । हाजीखांन इस मुस्लिम सेना रूपी कुमारी के मिलन से बड़ा पीड़ित हुआ । ऐसा वीररसमय विवाह रचा गया ।

विशेष— नांमा जोड़ो —शादी के पहले वर और वधू की कुण्डली आदि देख कर पंडित प्राय ज्योतिष विद्या के आधार पर अपनी राय देता है कि इनकी राशि मिलती है या नहीं । यदि राशि नहीं मिलती तो वह विवाह-सम्बन्ध ठीक नहीं माना जाता । निवतैरौ' शब्द भारी और हल्का दोनों अर्थों में प्रयुक्त होता है पर यहां पर हल्के और कमजोर के अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ है ।

नमतैरी घावे ।

आसालूध अजैपुर आवी ।
जुग[1] सहू जोवति जुआजुई ।
लसियो[2] हाजन प्रौढ़ो लाडो ।
अकवर फौज सचींत हुई ॥ १२

शब्दार्थ— आसालूध – आशालुब्ध अजैपुर – अजमेर आवी – आई सहू – संपूर्ण
जोवति – देखती हुई जुआजुई – अलग-अलग लसियो – भाग गया
प्रौढ़ो – पकी हुई उम्र का लाडो – दूल्हा सचींत – चिंतातुर ।

भावार्थ— सेना रूपी कुमारी आशालुब्ध होकर रास्ते में अलग अलग लोगों को आतुरता से देखती हुई अजमेर आ पहुंची पर हाजीखान जैसा प्रौढ़ पति उसे ग्रहण न कर सका और भाग गया । जिससे अकबर की कुमारी (फौज) चिंतित हो उठी ।

विशेष— 'आसालूध' शब्द प्राचीन राजस्थानी में अत्यंत प्रेमातुर भावना के लिए विशेषतया प्रयुक्त होता रहा है । 'ढोला मारू' के दोहों में इसका प्रयोग बड़े ही सुन्दर ढंग से हुआ है—

> आसालूध उतारियो बग कंठुणी बढ़इ ।
> चूमै पड़िया हंसला आंणै मांनसरेह ॥

इस शब्द के अनेक रूपभेद भी हैं । यथा-आसालुध आसा लूंधी आसाळू आसालूत आदि ।

---

[1] अजमपुरि माई लगि जुवा [2] लिखियो ।

डोहळ मोर पड़ा गजडवर।
वजिन्त्रि नर हैमर कर[1] वस।
आऊगति हिंदूआं ऊपरि।
दससहँसि नवसहँसउ दस ॥ १३

शब्दार्थ — डोहळे – विनाशित करती हुई मोर पड़ा – बादशाही सेना गजडंबर – हाथियों का समूह वजिंत्रि – बाजे हैमर – हयवर घोड़े आऊगति – मद् मुग्ध गति दससहँसि – सिसोदिया की नवसहँसउ – राठौड़ों की।

भावार्थ — बादशाही सेना हाथियों के समूह का विनाश करती हुई विभिन्न बाजे बजाती हुई सिपाहियों व घुड़सवारों से सुसज्जित मदमुग्ध गति से उदयपुर तथा जोधपुर के हिन्दू योद्धाओं पर चढ़ आई।

विशेष — यहाँ उदयपुर के सिसोदिया योद्धाओं के लिये 'दससहँसि' शब्द प्रयुक्त हुआ है तथा जोधपुर के राठौड़ों के लिये 'नवसहँसउ' शब्द प्रयुक्त हुआ है। कई एक ऐतिहासिक गीतों में भी ये शब्द इस आशय में प्रयोग में लिये गये हैं। ख्यातों से ऐसा प्रतीत होता है कि उदयपुर के महाराणा जगतसिंह ने हाजीखान की मदद में अकबर की सेना का मुकाबिला करने के लिये कुछ सिपाही भेजे थे तथा राठौड़ों की फौज से अकबर की सेना का बाद में मुकाबिला हुआ था। उसी प्रसंग की ओर ये शब्द संकेत करते हैं।

[illegible]

दळपति कोइ[1] न दूजौ वरदळि ।
निरदळीया मात लोक[2] नर ।
करि ऊछजि[3] विसकन्या कहियौ ।
राय तणै घरि महीस वर ।। १४

शब्दार्थ— दळपति – सेनापति वीर दूजौ – दूसरा वरदळि – श्रेष्ठ सेना वाला निरदळीया – संहार कर दिया मात लोक – सभी लोगों को करि – कर, हाथ ऊछजि – ऊंचा कर के कहियौ – कहा राय तणै घरि – राव के घर का महीस – प्राप्त करूंगी वर – पति ।

भावार्थ— उस सेना रूपी कुमारी को कोई भी दूसरा श्रेष्ठ वर (सेनापति) दिखाई नहीं दिया । कितने ही लोग जो उसके सामने आये उनका उसने संहार कर दिया । अंत मे हाथ उठा कर विष-कन्या ने उद्घोष किया—मैं वीर राठौड़ राव के घर का वर ग्रहण करूंगी ।

विशेष— 'वरदळि' शब्द डिंगल साहित्य में कई अर्थों में प्रयुक्त हुआ है । इसका अर्थ समान बराबरी का दूल्हे का दल भी होता है ।

कोप मा कि मापिरि

सझि आउध तिम रूप सनाही ।
आभूखण आभरणे अंग ।
पारंभ मीर धणा गुडि-पाखर ।
जोधां सूं रचियौ रिण जंग ।। १५

शब्दार्थ— सझि – सज कर आउध – अस्त्र-शस्त्र सनाही – कवचयुक्त आभूखण – आभूषण गुडि-पाखर – तैयार करके जोधां सूं – जोधा के वंशजों से रचियौ – रचा।

भावार्थ— अस्त्र-शस्त्र और कवचों रूपी आभूषणों से अपने अंगों को सज्जित कर उस सेना रूपी कुमारी ने पूरी तैयारी के साथ राव जोधा के वंशजों से युद्ध रूपी विवाह प्रारंभ किया ।

विशेष— 'गुडि-पाखर' शब्द के अन्य अर्थ इस प्रकार भी होते हैं—गुडि–हाथी की झूल पाखर–घोड़े का कवच अथवा झूल। राव रतनसिंह राव जोधा का वंशज था। अतः कवि ने मुगलों की सेना का जोधों के साथ युद्ध करना लिखा है। जोधां का अर्थ यहाँ योद्धा भी लिया जा सकता है ।

सगति वडा वड एक सारिखा ।
बाबर-हर सलखा-हर बेह ।
अकन कुवारि नारि अजमेरो ।
चाली तै सांहमि चढ़ जेह ॥ १६

शब्दार्थ— सगति – शक्ति वडा वड – बड़ से बड़े सारिखा – बराबरी के बाबर-हर – बाबर के वंशज सलखा-हर – राव सलखा के वंशज अकन कुवारि – अखंड कुमारी नारि अजमेरी – अकबर की फौज सांहमि – सामने ।

भावार्थ— बहुत बड़ी शक्ति और सामर्थ्य के धनी दोनों दलों के योद्धा एक-सी ताकत वाले हैं । उधर वीर बाबर के वंशज हैं । इधर राठौड़ राव सलखाजी के वंशज हैं । बाबर के वंशजों की वह सेना रूपी अखंड कुमारी राठौड़ों की ओर अग्रसर हुई ।

विशेष— डिंगल में 'हर' 'अमनमौ' आदि शब्दों को किसी के प्रसिद्ध पूर्वज के नाम के आगे लगा कर उसके वंशानुगत गौरव को प्रकट करने की परिपाटी है । डिंगल गीतों में इस प्रकार के प्रयोग अधिक पाये जाते हैं ।

गाज अवाज सांभळे गढ़पति।
आकपिया धरपुड़ अनडाह।
ओघ तण घरि वींद जोवती।
धूमी सांमी मीर धड़ाह॥ १७

शब्दार्थ— गाज – गर्जन सांभळे – सुन कर आकपिया – भयभीत हुए धरपुड़ – पृथ्वी की परतें अनडाह – पहाड़ ओघ तणो – राव ओघा के घरि – वंश में वींद – दूल्हा जोवती – ढूंढती हुई धूमी सांमी – सामने मुड़ी।

भावार्थ— युद्ध के बाजों की आवाज बड़े-बड़े गढ़पतियों के कानों तक पहुंची। इस आवाज से धरती के परत और पर्वत तक कंपायमान हो गये। राव ओघा के वंश में से अपना वर ढूंढने के लिये मुसलमानों की सेना रूपी कुमारी सामने मुड़ी।

विशेष— 'अनड' शब्द राजस्थानी में पर्वत, योद्धा, किला, हाथी, अनम्र पशु आदि के लिये भी प्रयुक्त होता है। 'अनड़' शब्द का सामान्य अर्थ 'बंधन में न आने वाला' से है—नरड़णो = बांधना, अनड़ = बंधन-मुक्त।

वड सिरहू[1] नांखे वड वहती ।
विसरसि पूरति विपरति वेस ।
लाडी माव[2] गगन लोहती ।
दोड़ाया भड़[3] चौदस वेस[4] ॥ १८

शब्दार्थ — विसरसि – विषयभोग का आनन्द पूरति – पूर्ण करती हुई विपरति – विपरीत वेस – पहनावा लाडी – दुल्हिन माव – आती है, गगन लोहती – मस्ती में झूमती हुई भड़ – योद्धा चौदस – चारों दिशाओं में।

भावार्थ—अपने बड़े मस्तक को इधर-उधर घुमाती हुई (?) विषयभोग के आनन्द की पूर्ति करती हुई विपरीत वेश (कवच अस्त्र-शस्त्र आदि) धारण किये वह दुल्हिन मस्ती में झूमती हुई चली आ रही है। उसे देख कर बड़े-बड़े योद्धा चारों दिशाओं में भाग गये।

विशेष— यहां कवि ने सेना रूपी कुमारी को 'विपरति वेस' अर्थात् विपरीत वेश में बताया है क्योंकि दुल्हिन तो कपड़ों और अलंकारों से सजी हुई होती है पर इस सेना रूपी कुमारी ने तो कवच आदि पहिन रखे हैं।

---

[1] सिरि ह [2] विपरीत गति प्रकटति मदछ रोसि [3] देखें [4] दुड़िया [5] भिड़भाया [6] देसि।

निमत्रीहार[1] मयार निसासहि ।
त्रिहँगसि ढोलां रवद दुवाड[2] ।
बिसकन्या देखे बजवाया[3] ।
मुणियत मांड अनड़ मेवाड़ ।। १९

शब्दार्थ— निमंत्रीहार – आमंत्रित लोग मयार – प्रभु निसासहि – निश्वास त्रिहँगसि – ढोलों की आवाज रवद – मुसलमान दुवाड – दिखला कर बिसकन्या – विषकन्या देखे – देखने पर, बजवाया – बजवाये मुणियत – बोले मांड – मंडप अनूपम अनड़ – योद्धा ।

भावार्थ— दुश्मनों द्वारा दिखवाई गई ढोलों की आवाज से आमंत्रित लोग निश्वास भरने लगे । विषकन्या ने ये ढोल मिलन के उस अवसर पर बजवाये जब शिशोदिया वंश के योद्धाओं ने उसे मंडप में आवाज दी ।

विशेष— 'निमंत्रीहार' शब्द आधुनिक राजस्थानी में 'निमतियार' रूप में प्रचलित है । त्रिहँगसि' शब्द ढोलों की आवाज की विशेष ध्वनि को प्रकट करने के लिये प्रयुक्त हुआ है ।

निमंत्रिगार [1]मयार हींमनि रवे [2]दुवारि [3]बजवाया ।

विकट अणी नख कूंत वधारे ।
भुज[1] भळक्का भाला भालोड़ ।
खापर फौज पाधरा खड़िया ।
जैतारण ऊपरि जग जोड़ ॥ २०

शब्दार्थ— अणी – सेना कूंत – भाला वधारे – बढ़ा कर भुज भळक्का – भुजाओं की चमक भालोड़ – तीर खापर – मुसलमान पाधरा – सीधा खड़िया – प्रस्थान होके जंग – युद्ध ।

भावार्थ— *विकट सेना रूपी कुमारी ने भाले रूपी नाखून बढ़ा रखे हैं ।* भाले और तीरों की चमक ही उसकी भुजाओं की चमक है । इस प्रकार की दुश्मनों की फौज (कुमारी) अपने अस्त्र हाँकती हुई सीधी जैतारण पर युद्ध करने के लिये चली आई है ।

विशेष— 'अणी' शब्द संस्कृत के 'अनीक' का अपभ्रंश रूप है । वैसे 'अणी' शब्द का प्रयोग राजस्थानी साहित्य में तीखेपन तथा भाले के लिये भी होता है । 'भालोड़' शब्द केवल तीर के आगे लगे हुए तीखे भाग के लिये भी प्रयुक्त होता है ।

---

[1] भुजि अंतारिए ।

मरि घड़ दूण सवालख आवध ।
सोळ दूण सभे सिणगारि ।
कूंत कवांण छुरी काछोली ।
मलफि[1] गुरज गहि[2] फणिज कुमारि[3] ॥ २१

शब्दार्थ— घरि-घड़ – शत्रु-सेना दूण – दुगुने आवध – आयुध अस्त्र-शस्त्र सोळ दूण – बत्तीस सभे – सज कर सिणगार – शृंगार, कूंत – भाला काछोली – विशेष प्रकार की छुरी मलफि – छलांग भर कर आगे बढ़ी गुरज – गदा के आकार का शस्त्र विशेष फणिज कुमारि – नागकन्या ।

भावार्थ— दुश्मनों की फौज अत्यधिक अस्त्र-शस्त्रों से ऐसी सुसज्जित है मानों उस फौज रूपी कुमारी ने बत्तीस प्रकार के शृंगार धारण कर रखे हैं । भाले कवान छुरी आदि कितने ही शस्त्रों से सुसज्जित हाथ में गुरज (एक प्रकार की गदा) लिये वह नागकन्या (सेना) छलांग भर कर आगे बढ़ी ।

विशेष— पीछे के द्वालों में कई स्थानों पर दुश्मनों की सेना के लिये 'विषकन्या' शब्द प्रयुक्त हुआ है । पर यहां भी कवि का तात्पर्य नागकन्या से ही है । यहां कवि ने उसके लिये 'फणिज कुमारि' शब्द का प्रयोग कर के यह स्पष्ट कर दिया है । वैसे प्राचीन काल में राजनतिक षड्यन्त्रों के लिए उधार की जाने वाली विषकन्याएं भी होती थी पर यहां उनसे तात्पर्य नहीं है ।

सोळह काछोली [1]मलहपा [2]गहे [3]फण मारि ।

अपछर देस मळै आखाड़ौ।
विघन तणौ रचियौ वीमाह।
रिणवट उरां[1] बांधीयौ रतन।
परा फौज आवी पतिसाह॥ २४

शब्दार्थ — अपछर – अप्सरा मळै – मिलता है आखाड़ौ – गायकों के शामिल होने का स्थान युद्ध-भूमि विघन – युद्ध रचियौ – रचा वीमाह – विवाह, रिणवट – क्षत्रियत्व उरां – इधर परा – उस तरफ, आवी – आई।

भावार्थ— अप्सराओं का समूह इन्हें देखने के लिए एक स्थान पर शामिल हो गया है। युद्ध रूपी विवाह रचा जा रहा है। इधर रतनसिंह ने अपने क्षत्रियत्व के गौरव को संभाला और उधर बादशाह की फौज आई।

विशेष— आखाड़ो' अथवा अखाड़ो' शब्द राजस्थानी में अप्सराओं गायकों या वेश्याओं के शामिल होने के स्थान के अतिरिक्त युद्ध-स्थल या युद्ध के लिये भी प्रयुक्त होता है। इसीलिए योद्धा के लिए 'अखाड़सिध' शब्द भी काम में लिया जाता है। 'रिणवट' शब्द कई स्थलों पर युद्ध के अर्थ में भी प्रयुक्त हुआ है।

उरां इधर।

मन खट राग वधा लग मौजां।
कटि मेखळ कसियौ कुरवांण।
आवै मीर घडा उपरम्भी।
नीभसत नेवर नीसांण[1]॥ २५

शब्दार्थ— खट राग – छः राग, वधा – स्वागत कर के लग – तक मौजां – हर्ष
मेखळ – मेखला करधनी कसियौ – कसा हुआ कुरवांण – (करवाल) तलवार
आवै – आती है मीर घड़ा – मुसलमानों की फौज उपरंभी – जोश से
पूर्ण नीभसतै – बजाते हुए, नेवर – नूपुर नीसांण – वाद्य विशेष।

भावार्थ— छहों रागों में गाये जाने वाले गीतों द्वारा स्वागत किये जाने के लिए मन में उमंग लिए कटि में तलवार रूपी करधनी कसे हुए बड़े जोश के साथ मुसलमानों की सेना रूपी कुमारी नूपुर और वाद्य विशेष बजाती हुई चली आ रही है।

विशेष— 'खट राग'—षट राग का तात्पर्य छः प्रकार के रागों से तो है ही पर इसके अतिरिक्त व्यंग्यात्मक रूप में इसका अर्थ द्वेष अथवा झगड़े से भी होता है। बोलचाल की राजस्थानी में भी इस आशय में प्रयोग होता है—'म्हारै तो उणसू खटराग होयग्यो।'

---

[1] पाठा. [illegible] निसाणी।

पाखर घोर वाजती पायस ।
कांकण हायळ चूड़कस[1] ।
साफर घड़ आवी सीमावत[2] ।
रयण रमाड़ण[3] रूक रस ॥ २६

शब्दार्थ— पाखर – घोड़े व हाथी का कवच घोर – ध्वनि वाजती – बजती कांकण – कंकण हायळ – अस्त्र विशेष चूड़कस – हाथ में धारण करने का गहना विशेष साफर घड़ – मुसलमानों की सेना सींमावत – सींवकर्ण का पुत्र रयण – रतनसिंह रमाड़ण – खिलाने के लिये रूक रस – युद्ध (तलवार की क्रीड़ा)।

भावार्थ— उस सेना रूपी कुमारी की पायल की ध्वनि तो घोड़ों के कवचादि की ध्वनि है तो फिर उसने कंकनयुक्त हाथ में विशेष प्रकार का शस्त्र ग्रहण कर रखा है। उसकी बाहों में 'चूड़कस' पहना हुआ है। हे सींवकर्ण के पुत्र रतनसिंह ! तुझे तलवारों की खिलवाड़ (युद्ध) से रस प्रदान करने के लिए मुसलमानों की सेना चली आई है।

विशेष— 'रमाड़णो' शब्द साधारणतया बच्चे आदि को खिलाने के अर्थ में प्रयुक्त होता है। पर विवाह के अवसर पर 'दूल्हे' के ससुराल में औरतें उसे अंतःपुर मे बुला कर विनोद आदि के लिए कई प्रकार के गीत गाती हैं तथा पहेलियां आदि भी पूछती हैं उसे भी 'रमाड़णो' ही कहते हैं।

---

[1]चूड़िकसि [2]सीमावति [3]रमाई ।

डाक हाक हूकळ भाडवर ।
डह डायणी उडियांण डोह ।
वर कज[1] चलि भावी विसकन्या ।
लखण बतीस[2] छतीसे लोह ॥ २७

शब्दार्थ— डाक – युद्ध का एक वाद्य हाक – ललकार, हूकळ – घोड़ों की हिनहिनाहट डैह डायणी – युद्धप्रिय देव उडियांण – आकाश डोह – विलोड़ित कर के वर कज – पति के लिये विसकन्या – नागकन्या लखण – लक्षण छतीसे लोह – छत्तीस प्रकार के अस्त्र-शस्त्र ।

भावार्थ— युद्ध के वाद्य वीरों की ललकार और घोड़ों की हिनहिनाहट सुन कर युद्धप्रिय देवता आकाश को विलोड़ित करते हुए युद्धस्थल पर उपस्थित होने को चले आ रहे हैं। बत्तीस लक्षणों वाली सभा रूपी विष कामिनी ३६ प्रकार के शस्त्रों से सज्जित होकर अपना वर प्राप्त करने के लिये चली आई है ।

विशेष— 'हूकळ' शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है। घोड़ आदि की हिनहिनाहट के अतिरिक्त ढोली आदि की गायन-ध्वनि को भी 'हूकळणो' कहा जाता है —'ढोली हूंकळै है ।

---

[1] कजि [2] बतीस ।

चीर जरद पाखर चडाउण ।
कांचू जिरह अड़ाव करि ।
प्रिउ कजि परिमळ रजी पीजरै ।
हाले ढूकी जोधहरि ॥ २८

शब्दार्थ— चीर – ओढ़नी का वस्त्र जरद – कवच पाखर – हाथियों व घोड़ों की झूल चडाउण – लहंगा कांचू – कंचुकी जिरह – विशेष प्रकार का कवच प्रिउ कजि – पति के लिये परिमळ – परिमल रजी धूलि पीजरै – शरीर पर हाले – चल कर ढूकी – पहुँची जोधहरि – राव जोधा के वंशज के पास ।

भावार्थ— सेना रूपी कुमारी के कवच ही चीर हैं। हाथी व घोड़ों की झूलें ही उसका लहंगा है। जिरहबख्तर ही उसकी कंचुकी है। अपने शरीर पर धूलि का परिमल लगाये वह अपने प्रिय राव जोधा के वंशज रतनसिंह को प्राप्त करने के लिये ठेट आ पहुँची है।

विशेष— पूरे द्वाले में एक रूपक की सृष्टि की गई है। 'चडाउण' शब्द संस्कृत के 'चण्डातक' का अपभ्रंश है। यहां यदि 'पीजरै' का अर्थ 'पींजस' (पालकी विशेष) से लिया जाय तो 'सेना रूपी प्रिय कामिनी का गर्द के पिंजरे में बैठ कर आना' इस प्रकार का अर्थ भी हो सकता है।

नयण कटाछ वाण नीछरती[1] ।
कसि चिहु दिस फेरती कटाह ।
ऊठ रयण वर परणण आवी[2] ।
घूमर कीयां[3] मीर घडाह ॥ २१

शब्दार्थ— नयण – नैन कटाछ – कटाक्ष वाण – तीर नीछरती – छोड़ती हुई, कसि – कसी हुई, चिहुं दिसि – चारों दिशाओं में कटाह – कटाक्ष रयण – रतनसिंह परणण – शादी करने के लिए आवी – आई घूमर कीयां – नृत्य करती हुई घड़ाह – सेना ।

भावार्थ— नयनों से बाण रूपी कटाक्ष छोड़ती हुई पूरी तरह से कसी हुई और चारों तरफ दृष्टि डालती हुई तथा नृत्य करती हुई सी वह सेना रूपी कुमारी अपने वर से विवाह करने के लिये चली आई है। हे रतनसिंह ! उसे ग्रहण करने के लिये तू कटिबद्ध हो ।

विशेष— घोड़े आदि को जब कसने के बाद सवारी की जाती है तो वह एक स्थान पर निश्चल नहीं रहता और चपलायमान हो उठता है। उसे 'घूमर घालना' कहते हैं। यहां घोड़ों का चपलायमान होना ही सेना रूपी कुमारी का नृत्य (विशेष) करना है।

---

[1]वैण नीछरते [2]परणेवा आई [3]कीयां ।

मेंड बच जेणि सेहुरा कामण ।
कर गवर माले किरमाळ ।
टूकी ढाल वेणि ढळकती ।
तोरण[1] जैतारण रिणताळ ॥ ३०

शब्दार्थ— मेंड बच – मंडप के बीच, सेहुरा – मौर, कामण – कामिनी गैवर – गजवर (हाथी) माले – मस्ती से चलती है किरमाळ – तलवार टूकी – पहुँची ढळकती – मुड़काती तोरण – विवाह के अवसर पर दूल्हा वर के मुख्यद्वार पर आकर द्वार पर बंधे लकड़ी के एक उपकरण को हरी टहनी से छूता है उस उपकरण को तोरण कहते हैं। जैतारण – मारवाड़ का एक ग्राम रिणताळ – युद्ध-भूमि।

भावार्थ— मडप के बीच खड़ी कामिनी के सिर पर मौर बंधा हुआ है। वह गजगामिनी हाथ में करवाल लिये मस्ती से झूम रही है। वह अपनी पीठ पर ढाल रूपी वेणी मुड़काती हुई जैतारण की युद्ध भूमि के तोरण पर आ पहुँची है।

विशेष— सेहुरा' शब्द राजस्थान में 'मौर' के अतिरिक्त अन्य अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। शादी के समय भाँवरे पड़ने पर वधू का मामा या भाई हथम का सरवा पकड़ कर उसे वर की ओर करता है उसे भी सेहरा देना' कहते हैं। राठौड़ रतनसिंह जैतारण का स्वामी था उस पर अकबर की यह फौज (अजमेर के पश्चात्) चढ़ आई थी इसीलिए सेना रूपी कुमारी का जैतारण के तोरण पर पहुँचना लिखा है।

---

[1] मानी किरमाळि तोरणि रिणताळि।

दूठि घड़ा हँसती गजदंती ।
आरति अति गति अंग अनंग ।
पाट अघोर रैण परणवा ।
चवरि चूंपि चढ़ चवरंग ॥ ३१

शब्दार्थ— दूठि – प्रचंड ताकतवर घड़ा – सेना आरति – आरती परछन पाट – वर और वधू के बैठने की चौकी अघोर – अध्वर, यज्ञ रैण – रतनसिंह परणवा – विवाह करने के लिये चवरि – चौरी चूंपि – चाव (चूंप) चवरंग – युद्धस्थल ।

भावार्थ— वह प्रचंड सेना रूपी कुमारी हाथी दांत का चूड़ा धारण किये हँसती हुई अपने अंगों में काम की उमंग भरती हुई और परछन करवाती हुई पाट पर बैठ कर विवाह-यज्ञ के द्वारा रतनसिंह से शादी करने के लिये बड़ी दक्षता और चतुराई के साथ चौरी (युद्ध-स्थल) पर चढ़ रही है ।

विशेष— 'दूठि' शब्द राजस्थानी में 'दुष्ट' के लिये प्रयुक्त होता है पर अच्छे अर्थ में इसका प्रयोग प्रचंड ताकतवर शक्तिशाली भी होता है । प्रथम पंक्ति में 'हँसती गजदंती' का अर्थ हाथियों के दांत दिखा कर हँस रही है भी किया जा सकता है ।

गजदाते चौरंग [1]चवरंग ।

रावत बींद नरिंद रतनसी।
बीरति दीयंतो बींद वग।
मौड़ मुगट सिर टोप माडियो[1]।
लागू[2] अठियो[3] अभिलग॥ ३२

शब्दार्थ — रावत – राजपुत्र बींद – दूल्हा नरिंद – नरेन्द्र बीरति – शौर्य वग – चला मौड़ – मौर मुगट – मुकुट टोप – सिर त्राण माडियो – धारण किया लागू – लगन वाला अठियो – खड़ा हुआ तैयार हुआ अभिलग – अभिलाषायुक्त।

भावार्थ — नरेन्द्र रावत रतनसिंह दूल्हे के रूप में शौर्य धारण किये कदम रख रहा है। उसने अपने सिर पर सिर त्राण रूपी मुकुट मौरसहित धारण किया। सेना रूपी कुमारी से विवाह करने की अभिलाषा रखने वाला वह दूल्हा लगन के साथ तत्पर हुआ।

विशेष — 'लागू' शब्द रामस्वामी से विशेष तथा निरंतर लगन रखने वाले के लिये काम में लिया जाता है। कहावत भी प्रसिद्ध है—बो तो उण री लागू पड़ियो है।

माडिमें लागे औठियो।

जग मळ भांण हुव अडजांनी[1] ।
मुणि सत जास ससार मनै[2] ।
काळौ[3] कोट दुवाहो[4] कमधज ।
किसनौ प्रणवर रयण कन्है ।। ३३

शब्दार्थ— भांण – भानु, अडजांनी – विवाह के अवसर पर बारात का प्रमुख पुरुष मुणि – कही हुई, सत – सत्य जास – जिसका मनै – मानता है काळौ – योद्धा कोट – रक्षक दुवाहो – दोनों हाथों में शस्त्र रखने वाला कमधज – राठौड़ किसनौ – किसनदास प्रणवर – इन्हें का पूर्ण विश्वासी मित्र रयण – रतनसिंह कन्है – पास ।

भावार्थ— संपूर्ण दुनियां को देखने वाला सूर्य ही बारात का प्रमुख पुरुष है जिसकी बात पूरा ससार सत्य मान कर स्वीकार करता है। बड़े बड़े योद्धाओं की रक्षा करने वाले तथा दोनों हाथों में शस्त्र धारण करने वाले राठौड़ रतनसिंह के साथ उसका विश्वासपात्र मित्र किसनदास भी है।

विशेष— 'काळो' शब्द से तात्पर्य काले सर्प से है। पर योद्धा के लिये भी 'काळो' शब्द राजस्थानी साहित्य में रूढ़ हो गया है क्योंकि योद्धा भी युद्ध में काले सर्प के समान भयकर प्रतीत होता है। किसनदास भी रतनसिंह के साथ युद्ध में काम आया था जिसका उल्लेख नीबाज के इतिहास में है।

---

१ बढ़ जानी २ मुणिस तिणा समद सार मनह ३ काळा ४ दुवाहा ।

पुगरण जांन सेन है सावति ।
प्रणवर गोयद[1] किसन प्रगाह[2] ।
सह[3] तणी घड़ सांम्हो रतनो ।
मिळियौ मौड़ बधे रिण[4] माह ॥ ३४

शब्दार्थ— पुगरण – वस्त्र जांन – बारात सावति – घोड़ों के जीन और कवच आदि
गोयंद – गोयंददास किसन – किसनदास प्रगाह – आगे सह – मुसलमान
तणी – की घड़ – फौज साम्हो – सामने मिळियो – मिला रिण –
युद्ध ।

भावार्थ— सेना द्वारा धारण किये हुए जीन और कवचादि मानो उस बारात के वस्त्र हैं जिससे सज्जित हो कर रतनसिंह अपने विश्वासपात्र मित्र गोयंददास तथा किसनदास को आगे रख कर तथा अपने सिर पर विवाह का मौर बांधे उस मुसलमानों की सेना (कुमारी) से युद्ध रूपी विवाह में मिला ।

विशेष— सावति शब्द सेना के कवचादि के अतिरिक्त अस्त्र-शस्त्र आदि युद्ध के उपकरणों के लिये भी प्रयुक्त होता है । गोयंददास का नाम भी योद्धाओं की उस सूची में है जो रतनसिंह के साथ इस युद्ध में काम आये थे ।

पुगरणि जेम सजेहो सामद ऊपरि गोयंद प्रगाहि [3]साह [4]मह ।

तप उल्हास तरसि मुणि सातन ।
चढ़ि घर सोह चढ़े ध्रू चीत ।
वीरत रयण तप तिण वेळा ।
ऊगा मुहि बारह आदीत ॥ ३५

शब्दार्थ— तप – कान्ति दीप्ति तरसि – तरसते हैं, मुणि – मुनि सातन – सात सोह – ओज ध्रू चीत – अटल चित्त वाला वीरत – शौर्य रयण – रतन सिंह, तिण वेळा – उस समय ऊगा – उदय हुए, मुहि – आगे आदीत – सूर्य ।

भावार्थ— उस स्थिर चित्त वाले रतनसिंह का दूल्हे के वेश में ओज देख कर मानों मुनियों का तप भी उसके इस ऐश्वर्य के लिये तरसने लगा । उस वीर का शौर्य उस समय इतना बढ़ गया था मानो उसके आगे बारह सूर्य एक साथ उदित हो गये हों ।

विशेष— ज्योतिष में 'द्वादश आदित्य' माने गये हैं । उन्हीं बारह आदित्यों से यहां तात्पर्य है । जिनके एक साथ उदित होने का यहां तात्पर्य है अत्यंत शौर्य और ओज का प्रकट होना ।

उडियण थाळ आवधे आखे ।
अत प्रब हूळ[1] हाथळां अनींद ।
भळके खगे ऊनगे भाले ।
वधाविजै रतनसी बींद ॥ ३९

शब्दार्थ— उडियण – आकाश थाळ – थाल आवध – आयुध अस्त्र-शस्त्र आखे – अक्षत प्रब – पर्व हूळ हाथळां – विशेष प्रकार के शस्त्र अनींद – अनिंद्य भळके – चमकते हुए खगे – तलवारें ऊनगे – नंगी वधाविजै – स्वागत किया जा रहा है।

भावार्थ— आकाश रूपी थाल में हूळ हाथळ आदि शस्त्र रूपी अक्षतों से इस महान् पर्व के अवसर पर नगी तलवारों और भालों की चमक के बीच योद्धा रूपी दूल्हे रतनसिंह का मांगलिक स्वागत किया जा रहा है ।

विशेष— विवाह के अवसर पर थाल में अक्षत आदि रख कर औरतें उनसे दूल्हे का स्वागत करती हैं। इस अवसर पर बधावे के गीत गाये जाते हैं जो बड़े मांगलिक माने जाते हैं। इसी भाव का रूपक उपरोक्त दूहे में है ।

---

[1] अनहूळां ।

दसण सयण रयण छळ धर्मगळ ।
राछ गळो धळ' मींच रहै ।
घड़ भारती ऊतर धारां ।
वरमाळा किरमाळ वहै ॥ ३७

शब्दार्थ— दसण – कवच सयण – हितैषी रयण – रतनसिंह छळ – योद्धा धरमगळ – युद्ध राछ – उपकरण गळो धळ – इर्द-गिर्द मींच – योद्धा घड़ – शरीर भारती – परिधान धारां – तलवार वरमाळा – वरमाला किरमाळ – करवाल तलवार वहै – चलती है ।

भावार्थ— उस युद्ध में कवच ही रतनसिंह के हितैषी हैं । आवश्यक उपकरणों के रूप में योद्धा लोग उसके इर्द गिर्द छाये हुए हैं । उसके शरीर की भारती शस्त्रों से उतारी जा रही है और वरमाला के स्थान पर तलवारें चल रही हैं ।

विशेष— 'धार' शब्द प्राय तलवार के अर्थ में ही प्रयुक्त होता है पर युद्ध में कई प्रकार के शस्त्र प्रयोग में लिये जाते हैं अत 'धारां' शब्द यहां सामान्य तौर पर सभी प्रकार के शस्त्रों के लिये प्रयुक्त हुआ है ।

रतनसी काव्य 'धळीपळ ।

उतबग वर वेहड़ा ऊतारै ।
दासव रतनौ हाथ दवै[1] ।
फारक भ्रांहमो सांहमो फेर ।
हुव हैकंप वीमाह[2] हुवै[3] ॥ ३८

शब्दार्थ— उतबग – सिर वर – श्रेष्ठ वेहड़ा – छिपट ऊतारै – उतारते हैं दासव – कह कर रतनौ – रतनसिंह, दव – स्पर्श करता है फारक – हल्का भ्रांहमी सांहमी – सम्मुख फेरै – फेरता है, हुव – होता है हैकंप – हल्ला वीमाह – विवाह ।

भावार्थ— युद्ध में रतनसिंह के हाथ से जो सिर कट-कट कर गिर रहे हैं व मानों बधावे (स्वागत) के लिये आई हुई स्त्रियों के सिर पर रखे छिपट हैं जिनका स्पर्श रतनसिंह अपने हाथ से कर रहा है और वे हल्के घड़े उसके सामने इधर-उधर फिरते हुए नजर आ रहे हैं। इस प्रकार शोर-गुल के बीच यह युद्ध रुपी विवाह सम्पन्न हो रहा है।

विशेष— विवाह के अवसर पर दूल्हे के स्वागत के लिये स्त्रियां अपने सिर पर हरी टहनियां आदि डाले हुए घड़े रख कर उसके सामने जाती हैं। उसी रस्म के साथ कवि ने यहां रुपक बांधने का प्रयत्न किया है ।

---

[1] दुवा मांमुहा [2] दीं या [3] हुवि [4] विवाह [5] हुवा।

मिळि¹ रज धूळ इळा नह मळ ।
मिळि घण घाय मुहि मडाणो ।
चित्रांगण विपरीत में चौरी² ।
तुरि चढ़ि परण³ खेम तणो ॥ ३९

शब्दार्थ— धूळ – धूलि इळा – पृथ्वी नह मळे – दिखाई नहीं पड़ती घण – बहुत घाय – प्रहार मुहि मंडाणो – युद्ध हुआ चित्रांगण – चित्तौड़ विपरीत– विरुद्ध तुरि – घोड़ा चढ़ि – चढ़ कर परणे – शादी करता है खेम तणो– खींवकर्ण का पुत्र ।

भावार्थ— मिलन के अवसर पर चारों ओर का वातावरण धूल से ऐसा आच्छादित हो गया कि पृथ्वी भी दिखाई नहीं पड़ती । अत्यधिक प्रहारों के बीच युद्ध रूपी मिलन हो रहा है । खींवकर्ण का पुत्र अश्वारूढ़ होकर चित्तौड़ के विरुद्ध विवाह करने के लिए चौरी पर चढ़ आया है ।

विशेष— विवाह रात्री के समय होता है इसलिए उस समय कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता । युद्ध से उड़ने वाली भूमि से छा जाने वाले अंधकार का साम्य कवि ने उस वातावरण से दिखाया है । चित्तौड़ के राणा उदयसिंह की फौज से भी संघर्ष हुआ था । इसी आशय से 'चित्रांगण' शब्द यहां प्रयोग में लिया गया है ।

---

¹मिळि चित्रंगढि ²चंवरी ³तुरि ⁴परणी ।

रुघ जुग वेद नृसींग है सारव ।
काट कडी बाज केवांण ।
सोकसि भड़ा रतनसी साड़ो ।
जुधि हथळेवै जुड जुवांण ।। ४०

शब्दार्थ— रध – ऋग्वेद जुग – यजुर्वेद नृसींग – वाद्य विशेष सारव – समान आवाज काट – कटने से बाजे – बजती है केवांण – कृपाण सोकसि – मस्ती में झूमती हुई, भड़ा – फौज साड़ो – दूल्हा जुधि – युद्ध में हथळेवै – पाणिग्रहण जुवांण – जवान ।

भावार्थ— नरसिंघा आदि वाद्य विशेष की ध्वनि तथा कवचों की कड़ियां व तलवारों के प्रहार की आवाज ही विवाह के अवसर पर की जाने वाली वेदोच्चारण की ध्वनि है । मस्ती में झूमती हुई सेना ही कुमारी है जिसके साथ युवा वर रतनसिंह का युद्ध रूपी विवाह में पाणिग्रहण हो रहा है ।

विशेष— नृसींग = नरसिंघा—यह तुरही की तरह का एक प्रकार का नल की तरह का तांबे का बना हुआ बड़ा बाजा होता है जो फूंक कर बजाया जाता है ।

पुहि गयणाग ग्रीघ पखारव ।
गोम गहै गज घाट गुड़ ।
पखर घड़ रतनौ परणीज ।
झांगी नेयर सद् गुडै ॥ ४१

शब्दार्थ— पुहि – वह गयणाग – गगन ग्रीध – गिद्ध पखारव – पंखों की आवाज तीरों की आवाज गोम – पृथ्वी गहै – रौंदा जाता है गज – हाथी घाट – समूह गुडै – धराशायी हो रहे हैं पखर घड़ मुसलमानों की सेना परणीजै – विवाह करता है झांगी – वाद्य विशेष नेयर – नूपुर सद् – आवाज ।

भावार्थ— आकाश में दूर-दूर तक गिद्ध आदि पक्षियों के पंखों की ध्वनि सुनाई पड़ रही है । पृथ्वी पैरों तले रौंदी जा रही है । हाथियों के झुण्ड के झुण्ड धराशायी हो रहे हैं । मुसलमानों की सेना रूपी कुमारी से रतनसिंह विवाह कर रहा है । विशेष वाद्य यंत्रों के साथ उस कुमारी (सेना) के नूपुर की ध्वनि मिल गई है ।

विशेष— युद्धस्थल पर गिद्ध चील आदि पक्षी मांस भक्षण के लिये दूर-दूर से तेजी के साथ उड़ कर चले आते हैं । उनके पखों की जोरों से आवाज होती है उसी को कवि ने पखारव कहा है । 'पखारव' का दूसरा अर्थ तीरों की आवाज भी हो सकता है क्योंकि तीरों के पीछे के भाग मे पखों के से उपकरण लगे रहते हैं ।

काबिल कोट तणी विषकांमणि ।
घाए[1] घूम सिंगारि घुरै ।
फिर फिर अफरि रतनसो फुरळ[1] ।
फौज अपूठ फेरि फिरै ॥ ४२

शब्दार्थ— काबिल – काबुल कोट – गढ़ तणी – की विषकांमणि – विषकन्या
घाए – प्रहार से सिंगारि – शृंगार अफरि – योद्धा जो पीछे न फिरे,
फुरळ – ग्रस्त-व्यस्त करना है अपूठ – पीठ दिखा कर।

भावार्थ— काबुलगढ़ की विषकन्या के प्रहार की ध्वनि ही शृंगार की ध्वनि है। पीछे न मुड़ने वाले योद्धा रतनसिंह ने मिलने पर उसे ग्रस्त व्यस्त कर दिया है जिससे वह पीठ दिखा कर युद्ध रूपी विवाह में भांवरे ला रही है।

विशेष— यह सेना तो दिल्ली से अकबर ने भेजी थी पर कवि ने उसे काबुल की विषकामिनी कहा है। क्योंकि उन मुसलमानों का असली वतन काबुल ही था।

पाठ [1]फिरतै अपूठा।

फेरी[1] अफरि फिरणी सि फेरी।
बींद रतनसी बांध बद।
घकघूणी फुरळी घो फुरळी[2]।
घेर मिळी सुरताण[3] घड़॥

शब्दार्थ— अफरि – न मुड़ने वाली फिरणी – फिरकी बींद – वर बद (बद्धि) – शस्त्र विशेष घकघूणी – झकझोरा फुरळी – इधर-उधर करती अस्त व्यस्त घेर मिळी – शामिल हुई सुरताण – बादशाह घड़ – सेना।

भावार्थ— पीछे न मुड़ने वाली उस सेना को योद्धा रूपी दूल्हे रतनसिंह ने शस्त्र विशेष से सज्जित होकर फिरकी (चकरी) की तरह फेर दिया और चारों तरफ से घिर कर एकत्रित होने वाली मुसलमानों की सेना को इस तरह झकझोरा कि वह इधर-उधर बिखर गई।

विशेष— राठौड़ रतनसिंह ने फौज को फिरकी की तरह फेर दिया' यह कह कर कवि ने रतनसिंह की वीरता के साथ युद्ध कौशल का भी वर्णन किया है। हाला झाला रा कुण्डळिया' में भी इस प्रकार के स्थल हैं।

फिरि फिरि   फुरळी   सुरतांण।

लोह विमूह रतनसी लाडै ।
खत्रि मारग रिण जग खरै ।
कायल फेरै घड़ा कावली ।
हठिमल परणी सूर हरै ॥

शब्दार्थ— लोह–शस्त्र विमूह–विमुख लाडै–दूल्हे ने खत्रि मारग–क्षत्रियत्व खरे–दृढ़ कायल–मुसलमान घड़ा–सेना कावली–काबुल देश की हठिमल–योद्धा परणी–ब्याही की सूर हरै–सूरसिंह के वंशज ने।

भावार्थ— युद्ध भूमि में क्षत्रियत्व का अत्यन्त दृढ़ता के साथ निर्वाह करने वाले उस दूल्हे रतनसिंह ने शस्त्रों के प्रहार से विमुख होने वाले मुसलमानों की सेना के साथ भाँवरें लिये। इस प्रकार सूरसिंहजी के वंशज रतनसिंह (योद्धा) ने इस सेना रूपी कुमारी के साथ विवाह किया।

विशेष— ख्यातों में यह बात मिलती है कि मल्ल जाति का किसी समय मारवाड़ पर राज्य था जिसके लोग बड़े बहादुर थे। आगे जाकर 'मल्ल' शब्द योद्धा के लिये रूढ़ हो गया और बहुत बड़े योद्धा के लिये उनके साथ 'हठी' (जो अपने हठ को पूरा निबाहता हो) शब्द का प्रयोग भी किया जाने लगा।

धमधक धोम होम धारा[1] रव ।
पुरि सिंदूर रुहिर[2] परनाळ ।
विपरति[3] गति रतनै अतवासै ।
विहड धड़ा परणी विकराळ ॥ ४५

शब्दार्थ— धमधक – युद्ध (चहल-पहल) धोम – धूम्र होम – यज्ञ धारा रव – शस्त्रों की ध्वनि रुहिर – रुधिर परनाळ – ऊपर से पानी पड़ने का नाला विपरति – विपरीत विलोम अतवासै – मृत्यु के समय विहंड – विध्वंस धड़ा – सेना परणी – ब्याही की ।

भावार्थ— उस युद्ध रूपी विवाह की चहल-पहल में शस्त्रों की ध्वनि ही विवाह यज्ञ के समय होने वाली मंत्रों की ध्वनि है । रक्त के नाले ही यहां सिन्दूर की पूर्ति करते हैं । इस प्रकार मृत्यु के अवसर पर रतनसिंह ने उस विकराल सेना का विध्वंस कर के उसके साथ एक दूसरे ही प्रकार (विपरीत) का विवाह किया ।

विशेष— 'धमधक' शब्द प्रायः विवाह शादी या त्यौहार के अवसर पर होने वाली चहल-पहल और व्यस्तता के लिये प्रयुक्त होता है पर यहां कवि ने युद्ध के अर्थ में भी इसे रखा है ।

---

[1]धेरा रुधिर [3]विपरीत अतवा

भाख सत्रां छटतीस भाखीजै ।
धरपुड़ घाय निहाड़ ध्रुब ।
झीरोहर भर भाट जुंबरिक ।
हुल हाथळ जिहि भगति हुवै ।। ४६

शब्दार्थ — भाख – वाणी (राग) सत्रां – शत्रुओं द्वारा छत्तीस – छत्तीस भाखीजै – कही जा रही है धरपुड़ – पृथ्वी के परत घाय – प्रहार निहाड़ – भयंकर ध्रुबै – आवाज झीरोहर – चूरचूर जुंबरिक – जबूरक छोटी तोप हुल – शस्त्र विशेष हाथळ – शस्त्र विशेष भगति – खातिर-तवाजो, हुवै – होता है।

भावार्थ— शत्रुओं की ओर से होने वाली आवाज ही मानों विवाह के अवसर पर गाई जाने वाली ३६ राग रागिनियां हैं। पृथ्वी के परतों पर प्रहार होने से चारों ओर भयंकर आवाज हो रही है। शस्त्रों के प्रहार से व छोटी तोपों के गोलों से सैन्य दल चूरचूर हो रहा है। हुल तथा हाथळ जैसे शस्त्रों से ही युद्ध रूपी विवाह में खातिर-तवाजो हो रही है।

विशेष— 'जंबरिक' शब्द फारसी के 'जबूरक' शब्द से बना है जिसका अर्थ ऊँट आदि पर लादा जा सकने वाली छोटी तोप से है।

वाहे हाथ[1] हुव हथवाहा ।
मांक[2] मणी सिर फूट मगि ।
वींदणि वींद बिन्हे समवादे ।
जू रमिया[3] सारे रिण जगि ॥ ४७

शब्दार्थ— वाहे हाथ – हाथ चलाते हैं, हथवाहा – प्रहार, मांक मणी – भालों की नोंक वींदणि – दुल्हन वींद – दुल्हा बिन्हे – दोनो समवादे – बराबरी का विद जू – जूआ रमिया – खेले रिण युद्ध ।

भावार्थ— दोनों पक्ष हाथ चला कर एक दूसरे पर प्रहार कर रहे हैं । भालों की नोंक से सिर आदि अंगों को छेदा जा रहा है । इस प्रकार सेना रूपी दुल्हन और योद्धा रूपी दूल्हे राठौड़ रतनसिंह के बीच तलवारों (शस्त्रों) से जुआ-जुई का खेल बराबरी के स्तर पर खेला जा रहा है ।

विशेष— शादी के पश्चात बड़ी थाली के आकार के बर्तन में पानी आदि डाल कर उसमें कुछ कीमती वस्तुऐं डाल दी जाती हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिये दूल्हा और दुल्हिन अपने हाथों से एक साथ प्रयत्न करते हैं । जो वस्तु प्राप्त कर लेता है उसकी जीत मानी जाती है । इसे जुआ जुई खेलना कहते हैं । इसी रस्म के साथ कवि ने ऊपर रूपक बांधा है ।

---

[1] हाथि [2] हथिवाहा अंत समवादी [3] रमै ।

जुध पारखि रमत जोधा रवि ।
काळा घाट घणावत केव ।
खापर घड़ रतनी खेड़ेचो ।
बिजड़े बाथां मिळिया बेव ।। ४८

शब्दार्थ— जुध युद्ध पारखि – मर्म जानने वाला रमतै – क्रीड़ा करते हुए, जोधा रवि – सूर्य वंशी योद्धा काळा – योद्धा घाट – समूह घणावत – बनाते हैं केव – (केवी) शत्रु खापर – मुसलमान घड़ – फौज खेड़ेचो – राठौड़ बिजड़े – तलवारों से बाथां – बाहुपाश मिळिया – मिले बेव – दोनों ।

भावार्थ— युद्ध कला में प्रवीण वह सूर्यवंशी योद्धा दुश्मनों की फौज के योद्धाओं के समूह से घिरा हुआ युद्ध-केलि कर रहा है । इस प्रकार मुसलमानों की सेना (दुल्हन) और राठौड़ रतनसिंह (दूल्हा) तलवारों के बाहुपाश में मिले ।

विशेष— खेड़ेचा' शब्द राठौड़ों के लिये प्रयुक्त होता है क्योंकि राठौड़ों के पूर्वज राव सीहाजी ने पहले-पहल 'खेड़' (मारवाड़ का एक प्राचीन ग्राम) में अपनी राजधानी कायम की थी । उसके पश्चात ही राजस्थान की अन्य रियासतों पर राठौड़ों का राज्य कायम हुआ । प्राचीन राजस्थानी काव्य मे स्थान विशेष से सम्बन्ध रखने के कारण राठौड़ों के लिये 'कनोजों' और 'जोधपुरों' आदि शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं । यही परिपाटी अन्य राजपूत जातियों के नामकरण (विशेषण) में भी प्रयुक्त हुई है ।

सूट हार अयार तुरगम ।
पहुटति मांग अमग पड़ी ।
कमधज रतन स्यूं विपकामिणि ।
चाचरि चवरग पलगि चढ़ी ।। ४६

शब्दार्थ— तूटै – टूटते हैं अयार – घोड़े की गर्दन के बाल तुरंगम – घोड़े पहुटति – छिन्न-विछिन्न अमग – काम कमधज – राठौड़ स्यूं – से चाचरि – युद्धस्थल चवरंग – युद्ध पलगि – पलंग पर ।

भावार्थ— घोड़ों की गर्दन के बालों में पिरोये हुए हार टूट-टूट कर बिखर रहे हैं वे मानो सेना रूपी कुमारी के मांग के मोती हैं। इस रूप में राठौड़ रतनसिंह के साथ कामवश वह विपकामिनी युद्ध रूपी पलंग पर चढ़ी ।

विशेष— अयार' शब्द तुर्की भाषा के 'याल' शब्द से बना है हिन्दी में जिसका रूप 'अयाल' है। कमधज' शब्द राठौड़ के लिये प्रयुक्त होता है जिसका तात्पर्य है सिर कटने पर भी लड़ने वाले का कबंध (कमधज) ।

बोलै मयळ सबळ दळ भूप बळ[1] ।
जीय जीय मुख वाणि वखाणि ।
रगि जगि सेज रतन स्यूं[3] रमतां ।
सांच घड़ा मनियौ सुरताणि ॥ ५०

शब्दार्थ— बोलै – बोलती है मयळ – मल रहित सबळ – सबल दळ – सैन्य दल वखाणि – बखान जगि युद्ध स्यूं – से साथ रमतां – केलि करते समय सांच – सत्य बल घड़ा – सेना मनियौ – माना सुरताणि – बादशाह।

भावार्थ— बादशाह के सबल दलों वाली सेना रूपी कुमारी रतनसिंह से विवाह करने पर गर्वरहित सत्कारपूर्ण और प्रशंसायुक्त वाणी बोल रही हैं। युद्ध रूपी सेज पर रतनसिंह के साथ काम क्रीड़ा (युद्ध) करते हुए बादशाह की उस सेना रूपी दुल्हन ने रतनसिंह की असलियत (सत्य) को स्वीकार किया।

विशेष— इस छाले में युद्ध के लिये काम-केलि का रूपक बांधने का प्रयास किया गया है। दूसरी पंक्ति के प्रारम्भ में आने वाला 'रंगि' शब्द 'सेज' का विशेषण है जिसका अर्थ है—काम-केलि के लिये बिछाई गई सेज।

बोलइ मयळि सबळि बळि भूप बळि [2]मुखि [3]रतनसि।

रिणवट पात्र[1] खत्रीवट रतनै ।
घाए मनावे मीर घड़ाह ।
लोहां लिय तोडिया लाड ।
कांपू ओसण कसण कडाह ॥ ५१

शब्दार्थ— रिणवट – युद्ध खत्रीवट – क्षत्रियत्व घाए – प्रहारों से मनावे – मना कर, मीर घड़ाह – मुसलमानों की फौज लोहां – शस्त्रों से तोडिया – तोड़े लाड़ – दूल्हे ने कांपू – कंचुकी ओसण – कवच कसण – कंचुकी का बंध कडाह – कड़ियां।

भावार्थ— रणक्षेत्र में अपना क्षत्रियत्व निबाहने वाले पात्र रतनसिंह ने मुसलमानों की उस फौज को शस्त्रों के प्रहार से मनाया (अपने वश में किया)। उसने सेना रूपी कुमारी की कवच रूपी कंचुकी के बंध व अन्य शृंगार शस्त्र प्रहार रूपी आलिंगन के मर्दन से तोड़ डाले।

विशेष— लड़ धातु से संस्कृत शब्द 'लाडयति' बनता है। उसीसे राजस्थानी में 'लाड' शब्द बना है जिसका अर्थ होता है प्यार स्नेह आदि। इसलिए जो दूल्हा अत्यंत प्यारा है उसके लिये 'लाडो' शब्द प्रयुक्त हुआ है। स्त्री०—लाडी।

धार सनाह प्रसिद्ध[1] घ्रुसटिया ।
नांमी सिंदूरी[2] मुख नारि ।
भिड मदन गह विरह भांजियो ।
रतनै बांकुड़ भरतारि[3] ॥ ५२

शब्दार्थ— धार – तलवार, शस्त्र सनाह – कवच प्रसटिया – ध्वंस किया नांमी – जबरदस्त सिंदूरी मुख – सिन्दूर की तरह के मुख वाला—मुसलमान भिड़ – भिड़ करके गह – गर्व भांजियो – नष्ट कर दिया बांकुड़ – बांकुरे, भरतारि – पति ।

भावार्थ— शस्त्रों से कवच (कंचुकी) आदि का ध्वंस कर सिन्दूर जैसे लाल मुख वाली उस नारी (सेना) के साथ काम-केलि (युद्ध) कर के उसकी विरह-व्याकुलता बांकुरे पति रतनसिंह ने समाप्त करदी ।

विशेष— 'सिंदूरी मुख नारि'—अकबर की फौज मुसलमानों की थी जिनके चेहरे की ललाई के आधार पर ही उस सेना रूपी नारी के मुख को यह उपमा दी गई है । 'नांमी' शब्द राजस्थानी में बहुत ही प्रसिद्ध (जिसका अपना नाम दुनिया में हो) या जबरदस्त व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है ।

---

[1]प्रगत [2]नीयांम [3]भिड रतनै बांके भरतारि ।

रूक गज हय घड़ झपटी रतनै ।
बाथर सु चित जूंझै थगि ।
झापरि असुरि अहर खंडरिया ।
रुधिर सिंचोळ तंबोळ रंगि[1] ॥ ५३

शब्दार्थ— रूक – तलवार, घड़ – सेना झपटी – प्रहार किये बाथर – मुसल्मान जूंझै – युद्ध करके थगि – सुन्दर, झापरि – मुसलमानों की असुरि – मुसलमान स्त्री अहर – अधर, खंडरिया – खंडित किये सिंचोळ – सींच कर, रंजित कर, तंबोळ – तांबूल ।

भावार्थ— युद्ध में चित्त लगा कर जूझने वाले रतनसिंह ने अपनी तलवार से घोड़ों तथा हाथियों वाली सेना पर प्रहार किये। मुसलमानों की उस असुरी (दुल्हन) के अधरों को उसने खंडित कर दिया जिससे रुधिर रूपी तांबूल-रंग से वे (अधर) रंजित हो गये।

विशेष— इस द्वाले में कवि ने युद्ध का रूपक दूल्हे और दुल्हिन की प्रेम क्रीड़ा आलिंगन-अधरामृत पान तांबूल-सेवन आदि के साथ बांधा है।

रूक सूं गज घटा झापटई रतनै बाबरि सेज मिलि झूझ बबरगि [1]रुधि रस चोळ तंबोळ रंगि ।

रमि रस भ्रकस सत्ति गति रतनै ।
जग खग भग जुभ्राजुभ्रो[1] ।
खंडविहड हुभ्रौ[2] खेड़ेचौ ।
हुवइ घड़ा लयलीन हुवौ ॥ ५४

शब्दार्थ— रमि – क्रीड़ा करके भ्रकस – गर्व सहित सत्ति – सत्य शौर्य जंग – युद्ध खग – तलवार, जुभ्राजुभ्रो – अलग-अलग खंड विहंड – टूक-टूक खेड़ेचौ – राठौड़ हुवइ – हुआ घड़ा – सेना लयलीन – लीन हुवौ – हुआ ।

भावार्थ— शौयपूर्ण ढग से गर्वीला राठौड़ रतनसिंह युद्ध रूपी क्रीड़ा में तलवार के रस का उपभोग करता हुआ अपने अंग-उपांगों सहित (टूक-टूक हो कर) उस सेना रूपी सुन्दरी में लीन हो गया ।

विशेष— २३ वें द्वाले मे कवि ने विवाह के समय को अंतिम क्षण बताया है और फिर ४५वें द्वाले में मृत्यु के अवसर पर सेना रूपी कुमारी के साथ रतनसिंह का विवाह करने का वर्णन किया है । उसी रूपक का निर्वाह करते हुए कवि ने यहाँ रतनसिंह का (टूक-टूक हो कर) सेना मे विलीन हो जाना लिखा है ।

पाठान्तर [1] अंगे अंग खंड अंग जुवा जुवा [2] हुवे [3] लयलीण ।

क्रोध मुखी सारां मति कांमणि ।
विसधारी निज लीध वर[1] ।
ढुळिय रयण ढोलियै[2] ढोवै ।
लोह तणा वाजै लहर ॥ ५५

शब्दार्थ— सारां – तलवारें, मति – बुद्धि कांमणि – कान्तिवान विसधारी – विष कामिनी लीध – लिया प्राप्त किया वर – दूल्हा ढुळिय – बिछाये हुए, रयण – रतनसिंह, ढोलियै – पलंग ढोवै – युद्ध लोह – शस्त्र तणा – के वाजै लहर – निरंतर ध्वनि हो रही है ।

भावार्थ— तलवार की चमक के समान मतिवान उस क्रोधित मुख वाली विषकामिनी ने आखिर अपना वर प्राप्त कर ही लिया । युद्ध रूपी पलंग पर रतनसिंह के साथ वह शयन कर रही है और वहां शस्त्रों की ध्वनि (गायन आदि की ध्वनि) निरंतर हो रही है ।

विशेष— राजस्थानी में 'दूल्हे' के लिये 'ढोला' शब्द प्रयोग में आता है । दुलभ>दुल्लह>दुल्हा>दुलहा>ढाल्हा>ढालो । अत: ढोले के शयन करने के पलंग को ढोलियो कहते हैं ।

पाठांतर — [1]विसधारी तिम लीध वर [2]ढोलियइ ।

भोग विकळ त्रिया[1] मन भेळे ।
घटि घटि आउध विघन घड़ी ।
रंग पलंग पौढियो रतनो ।
चवरंग खग्ग[2] खुमार चढ़ी ॥ ५६

शब्दार्थ— भोग विकळ – भोग-विलास के लिये विकल भेळे – मिला कर लीन हो कर घटि – शरीर, आउध – शस्त्र विघन – युद्ध पौढ़ियौ – सो गया रतनौ – रतनसिंह, चवरंग – युद्ध खग्ग – तलवार खुमारि – खुमारी ।

भावार्थ— भोग विलास के लिये विकल उस दुल्हन (सेना रूपी) के साथ युद्ध रूपी संयोग में लीन हो कर कामकेलि के उस पलंग पर रतनसिंह तलवार के नशे की खुमारी में सो गया ।

विशेष— 'चवरंग' अथवा 'चौरंग' शब्द युद्ध के लिये प्रयुक्त होता है । हाथी, घोड़े रथ और पैदल—ये चार अंग सेना के माने गये हैं, जिसमें ये चारों अंग लग जाते हैं वह चौरंग = युद्ध ।

त्रिया [1]आवर्ट रिझावट वाले ।

प्रोसम मीर तणी घड़ पीणुक' ।
वेधक विघन तणौ वीमाह ।
रहियौ विचै खड़गहथ रतनौ' ।
म्रत्य मिंदर रिण चवरी मांह ॥ ५७

शब्दार्थ— घड़ – सेना पीणुक – उपभोग करने वाली वेधक – योद्धा विघन – युद्ध वीमाह – विवाह विचै – बीच में खड़गहथ – योद्धा तलवार धारण करने वाला रतनौ – रतनसिंह म्रत्य-मिंदर – मृत्यु का घर, रिण – युद्ध मांह – में ।

भावार्थ— रस का उपभोग करने वाली मुसलमानों की उस सेना रूपी कुमारी के साथ योद्धा का युद्ध रूपी विवाह हुआ । हाथ में तलवार धारण करने वाला रतनसिंह वहां बीचोंबीच मृत्यु रूपी घर की युद्ध रूपी चौरी पर शोभायमान हुआ ।

विशेष— 'पीणुक' शब्द रस का उपभोग करने वाले के लिये प्रयुक्त होता है पर 'पीणक' अर्थ (विशेष) को भी कहते हैं । क्योंकि सेना को नागकन्या कहा गया है इसलिए इसका दूसरा अर्थ नागकन्या से भी लिया जा सकता है ।

पीणजि   वेधग   रहि विजोय खड़गरंग रतनउ   चावरि सिर ।

रहुवि रूक परणियौ रतनौ ।
धड़ भड़ ऊरि सूट धूमो ।
हाट करग भोगावि हजूरे' ।
हाथ मेळावे सुजस हुओ' ॥ ५८

शब्दार्थ— रहुवि – युद्ध कर के रूक – तलवार, परणियौ – शादी की रतनौ – रतन सिंह भड़ – योद्धा ऊरि – हृदय धूमो – सिर, हाट – सोना करग – तलवार भोगावि – उपभोग करवा कर, मेळावे – मिला कर सुजस – सुयश हुओ – हुआ ।

भावार्थ— अपनी तलवार से युद्ध कर के अपने शरीर, उर और शीश को कटवा कर उस योद्धा रतनसिंह ने अद्भुत विवाह किया । अपनी तलवार से उसने इस अवसर पर सोना लुटाया और उस सेना (कुमारी) से हाथ मिला कर (युद्ध कर के) दुनिया में अपना सुयश फैला गया ।

विशेष— अंतिम पंक्ति में 'हाथ मेळावे' शब्द का विवाह के सम्बन्ध में अर्थ 'पाणिग्रहण' से है ।

जुहारी हुओ

जाती गई घरी[1] विण जोसण ।
विण वरणा पाखर विण चीर ।
मीर यची छोडाविय मुहियउ ।
मणि[2] मणि हुइ माणिक्य डंड मीर ।। ५६

शब्दार्थ— जाती गई – चली गई, घरी विण जोसण – बिना कवच (वस्त्र) आदि धारण किये वरणा – एक प्रकार का ढीलाढाला वस्त्र जो आराम के समय पहना जाता है पाखर – झूल आदि मीर यची – मुसलमान लड़की छोडाविय – छुड़वा कर मुहियउ – मुंह हुड – हड्डियां माणिक्य – लाल रंग का एक रत्न डंड – सीधी सेना ।

भावार्थ— वह सेना रूपी कुमारी कवच रूपी वस्त्र आदि से रहित होकर तथा झूल रूपी पहनने के वस्त्रों को छोड़ कर, अपना सा मुंह लेकर (मुंह तुड़वा कर) हड्डी रूपी माणिक्य की आभा को बिखेरती हुई वहां से सीधी होकर चल दी ।

विशेष— युद्ध कला में कई प्रकार के व्यूह होते हैं उनमें 'डंड' भी एक प्रकार का व्यूह होता है जिसमें सेना डंडे की तरह सीधी स्थिति में होती है । वैसे 'डंड' का सीधा अर्थ सेना से भी होता है ।

---

[1] जावती गई घरे [2] मीर यची तो छाये मुह चली [3] मुंहडे ।

हाकाँ वीर कळह पुन हुकहुक'।
रिण चामंड घण घेर रची।
पळचर नहराळां पखाळां।
माचि झड़ापडि झाट मची ॥ ६०

शब्दार्थ — वीर – भैरव कळह – युद्ध हुकहुक – ध्वनि विशेष रिण – युद्ध चामंड – रणचंडी घण घेर रची – नृत्य किया पळचर – मांसाहारी नहराळां – नाखून वाले जानवर पंखाळां – पक्षियों झड़ापड़ि – छीना झपटी झाट मची – ध्वनि हुई।

भावार्थ— युद्ध भूमि में भैरव आवाज कर-कर के जोर-जोर से हँस रहे हैं। रणचंडी चारों से नृत्य कर रही है। मांसभक्षी नाखून वाले जानवरों और पक्षियों के बीच होने वाली छीनाझपटी की आवाज हो रही है।

विशेष— जोरों से भयंकर रूप में हँसने की ध्वनि के लिये हुकहुक शब्द प्राचीन काव्य में प्रयुक्त हुआ है यथा—

हुक हुक रावण हसे दसण दस मुख दीपंतौ'
—पिंगळ शिरोमणि पृ ८७

इसलिये यहां पर भी हुकहुक शब्द भैरवों की हँसी के लिये ही प्रयुक्त हुआ है।

हाक वारा क्रिनोह लिये हुकहुक रंग चामंड घण घव ¹झड़ापडि।

भैरव[1] भूत भचाक्क भेळा ।
ग्रीधां लाधे राते ग्रास[2] ।
खड़खड़ीया कतियायन काफर ।
उडियण गहकिया आकास ॥ ६१

शब्दार्थ— भैरव – युद्धप्रिय शिव का रूप भचाक्क – मारकाट भेळा – शामिल ग्रीधां – गिद्ध लाधे – मिले राते – लाल खड़खड़िया – मिलने की ध्वनि कतियायन – कात्यायिनी काफर – मुसलमान उडियण – पक्षी गहकिया – आवाज की ।

भावार्थ— युद्ध की उस मार-काट के बीच भैरव और भूत प्रेत सभी शामिल हो गये । गिद्धों को खाने के लिये वहां मांस के लाल-लाल ग्रास प्राप्त हुए । कात्यायिनी और मुसलमानों के मिलने की ध्वनि होने लगी । उधर पक्षियों के मिलने की ध्वनि होने लगी और पक्षियों के झुण्ड के झुण्ड आकाश में आवाज करते हुए उड़ने लगे ।

विशेष— कात्यायिनी शब्द कात्यायन ऋषि की पत्नी तथा कत्य गोत्र से उत्पन्न स्त्री के लिये भी प्रयुक्त होता है पर यहां देवी के रणचंडी रूप से ही तात्पर्य है । चौसठ योगिनियों में से ९ वीं योगिनी भी इसका अर्थ होता है ।

पाठांतर [1]भचाक्क [2]ग्रीधां लाधे रत भखाति कराइण ।

मड़हट मांस लोहि महमहियौ ।
ग्रोघूळा मिळ गमेगमा ।
करको ऊपरि डूबिया काळू ।
साकण सावज हेक समा ॥ ६२

शब्दार्थ— मड़हट – श्मशान भूमि महमहियौ – फैल गया ग्रोघूळा – गिद्ध आदि पक्षी गमेगमा – चारों ओर से करको – हड्डियां डूबिया – गिरे, काळू – सफेद रंग का तथा पीली चोंच वाला पक्षी विशेष साकण – शाकिनी सावज – मांसाहारी पशु हेक समा – हिलमिल कर एक हो गये ।

भावार्थ— युद्ध के पश्चात की उस श्मशान भूमि में मांस और लोही चारों ओर फैल गया । इधर-उधर से आकर गिद्ध आदि पक्षी वहां शामिल होने लगे । हड्डियों के ढेर पर सफेद रंग और पीली चोंच वाले मांसाहारी पक्षी आ आ कर गिरने लगे । इस वातावरण में शाकिनी और मांसाहारी पशु एक ही स्थान पर एकत्रित हो गये ।

विशेष— ग्रोघूळा' का अर्थ वैसे गोधूलि वेला से होता है पर इस प्रसंग में इसका अर्थ गिद्ध आदि पक्षी ही ठीक बैठता है । 'सावज' शब्द वसे सिंह के बच्चे के लिये प्रयुक्त हो जाता है किन्तु यहां पर मांसाहारी पशुओं के लिये सामान्य अर्थ मे इसका प्रयोग हुआ है ।

गोधूळ[1] वेला ।

चाचर मांगणहार नसाचर ।
चतुर प्रेत अवे निरवांण ।
सकति समळि सिद्धि ग्रीधणि ।
रतनै मोकळिया भारांण ॥ ६३

शब्दार्थ — चाचर – युद्धस्थल मांगणहार – याचक नसाचर – मांसाचर, चोंच से खाने वाले अवे – दे दिया निरवांण – निर्वाण सकति – शक्ति, रणचण्डी समळि – चील ग्रीधणि – गिद्धनी मोकळिया – बुलाये भारांण – युद्ध ।

भावार्थ— युद्धस्थल में निर्वाण के महापर्व पर चतुर रतनसिंह ने प्रेत गिद्धनी चील शक्ति और चोंच से मांस भक्षण करने वाले पक्षी आदि याचकों को तृप्त करने के लिये बुलाया ।

विशेष— 'मांगणहार' का अर्थ मांगने वाले से है जिसका रूप आधुनिक राज स्थानी में 'मांगणियार' प्रचलित है। इसका साधारणतया अर्थ याचक से है पर ढोलियों की एक जाति विशेष का नाम भी मांगणियार है। विवाह के अवसर पर जिस प्रकार याचक लोगों को संतुष्ट किया जाता है, उसी प्रकार इस युद्ध रूपी विवाह के अवसर पर मांसाहारी याचकों को रतनसिंह ने बुलाया ।

सकति मास जिम पीवणि सामिख ।

सबसट घट सासावट सळसट[1] ।
गजगति वर कीधौ गजगाह[2] ।
रातल सावज ध्रवियां[3] रतनै ।
पूजवियौ पळ प्रघळ प्रवाह ।। ६४

शब्दार्थ— सबसट – युद्ध घट – सेना सासावट – बड़ा ढेर, सळसट – संहार गजगति – गजगामिनी वर – पति कीधौ – किया गजगाह – योद्धा रातल – लाल चोंच वाला मांसाहारी पक्षी सावज – मांसाहारी पशु, ध्रवियां – तृप्त कर दिया पूजवियौ – पूर्ण किया पळ – मांस प्रघळ – बहुत प्रवाह – पर्व दान ।

भावार्थ – सेना से युद्ध कर के और योद्धाओं के संहार से लाशों का बहुत बड़ा ढेर लगा कर उस गजगामिनी ने योद्धा रतनसिंह को वर के रूप में प्राप्त किया । रतनसिंह ने इस अद्भुत विवाह के पर्व पर मांसाहारी पशुओं और लाल चोंच वाले पक्षियों को मांस से खूब तृप्त किया ।

विशेष— प्रथम पंक्ति में प्रयुक्त 'सासावट' शब्द का अर्थ स्पष्ट नहीं है । मुंहणोत नणसी री ख्यात भा १ पृ ५१ (सं रामकर्ण आसोपा) पर 'सासोटा' शब्द तालाब आदि के बीच की ऊँची जगह (जो टापू की तरह होती है) के लिये प्रयुक्त हुआ है उसी के आधार पर हमने 'सासावट' का अर्थ यहां किया है ।

[1] [illegible] [2] गजपट वीर दीधै गजगाहि [3] ध्रवियां ।

राज करै सुरथानक रतनी ।
आमल आप कनै[1] जगदीस ।
हलिया पलचर[2] म्हूतां हुवतां ।
ऊगसतै देतां आसीस ॥ ६५

शब्दार्थ— सुरथानक – स्वर्ग रतनी – रतनसिंह आमल – साथ कनै – पास हलिया-चले पलचर – मांसाहारी हुवतां – उड़ने का प्रयत्न करते हुए ऊगसतै ऊपर उठते हुए ।

भावार्थ— राठौड़ रतनसिंह वीर गति को प्राप्त हो कर अब स्वर्ग में राज्य कर रहा है जहां वह स्वयं भगवान के साथ निवास कर रहा है । इस प्रकार की वाणी बोलते हुए और रतनसिंह को आशीष देते हुए मांसाहारी पक्षी आसमान की ओर ऊपर उठे ।

विशेष— 'आमल' शब्द संस्कृत के 'यामल' शब्द से बना है जिसका अर्थ 'जोड़ा' या साथ' होता है ।

---

[1]कन्हे [2]पलमुख ।

रमि झकोळ विचाळै रतनौ ।
आतमभव सतियां अंगूठ ।
झूलर झळहळतै झुंझारे ।
कूंतहथो पौहतौ वैकूंठ ।। ६६

शब्दार्थ— रमि – खेल कर झकोळ – युद्ध विचाळै – बीच में आतमभव – ब्रह्मा अंगूठ – अंग+उठ. शरीर त्याग कर झूलर – झुंड झळहळतै – दीप्तिमान हो कर झुंझारे – योद्धाओं कूंतहथो – योद्धा (जिसके हाथ में भाला हो) पौहतो – पहुंचा ।

भावार्थ— युद्ध के बीच वीरतापूर्ण केलि कर के देह त्याग कर साथ चलने वाली सतियों के झुण्ड के साथ तथा वीर गति प्राप्त करने वाले योद्धाओं के साथ वह रतनसिंह वैकुंठ में ब्रह्मा के पास पहुंच गया ।

विशेष— 'खड़गहथो' तथा 'विजड़हथो' आदि शब्द शस्त्रधारी योद्धा के लिये प्रयुक्त होते हैं उसी प्रकार 'कूंतहथो' शब्द भी भाले अथवा शस्त्रधारी योद्धा के लिये यहां प्रयुक्त हुआ है ।

चतुर मयण मालती ध्रताचणि ।
रंभ त्रिलोचन ग्रंब रथ ।
परणी ग्रद्ध रतनसि पीहुतै ।
प्रसिद्ध त्रिजग राली परसिद्ध ।। ६७

शब्दार्थ— मयण – मदन कामदेव मालती – पूर्ण युवा ध्रताचणि – घृताची रंभ – रंभा त्रिलोचन – त्रिलोचना ग्रंब – आकाश परणी – ब्याही की ग्रर्द्ध – है, पीहुत – पहुंच कर।

भावार्थ— आकाश में रथ के ग्रदर सुशोभित होने वाली घृताची रंभा और त्रिलोचना जैसी पूर्ण युवा ग्रप्सराएँ जो काम की चतुराई में ग्रपूर्व हैं उनका रतनसिंह ने वहां पर पहुंच कर वरण किया ग्रौर ग्रपनी ख्याति को तीनों लोकों में फैला दिया ।

विशेष— यहां 'तीनों लोकों' से तात्पर्य—पाताललोक मृत्युलोक तथा स्वर्ग लोक से है । प्रथम पंक्ति में प्रयुक्त 'मालती' शब्द का ग्रर्थ काम की मस्ती में झूमती हुई, से भी लिया जा सकता है ।

बळभद्र द्रू पहिलाद बभीषण ।
रतनौ रुपमांगद अमरेस ।
मांझि हुतौ मीच कुळ मंडण ।
सहचारी जुहिठ्ळ सारीस ।। ६८

शब्दार्थ— बळभद्र – बलदेव द्रू – ध्रुव पहिलाद – प्रह्लाद बभीषण – विभीषण रुपमांगद – रुक्मांगद अमरेस – इन्द्र मांझी – मुखिया हुतौ – था मीच – योद्धा कुळ मंडण – कुल में श्रेष्ठ जुहिठ्ळ – युधिष्ठिर, सारीस – समान।

भावार्थ— वह राठौड़ रतनसिंह बलदेव ध्रुव प्रह्लाद विभीषण रुक्मांगद और राजा इन्द्र के गुणों वाला था। अपने कुल में श्रेष्ठ वह मुखिया युधिष्ठिर के समान सत्य का सहायक था।

विशेष— यहां कवि ने कई महापुरुषों तथा देवताओं के समान रतनसिंह को बताया है। इससे तात्पर्य केवल इतना ही है कि उसमें इन महापुरुषों के से गुण थे।

परहर नाग तणौ पुर नरपुर ।
जमपुर पर सु गयण जुर्वाण ।
अचळ गिरसर सुरतरु ऊपरि ।
विच वसियौ वैकुंठ विमांण ॥ ६६

शब्दार्थ— परहर – त्याग कर, नाग तणौ पुर – नागलोक जमपुर – यमपुर गयण – आकाश जुर्वाण – जवान अचळ – अविचल गिरतर – उत्तम सुरतर – कल्पवृक्ष ऊपरि – ऊपर विच – बीच में वसियौ – बसा विमांण – विमान ।

भावार्थ— युवा रतनसिंह का विमान नागलोक मृत्युलोक और यमलोक को त्याग कर आकाश में उत्तम वृक्षों से श्रेष्ठ कल्पवृक्ष को भी पीछे रख कर वैकुंठ में जाकर बसा ।

विशेष— 'अचळ' का तात्पर्य पर्वत से भी होता है क्योंकि पर्वत एक स्थान पर स्थिर रहता है । गिरतर के पहिले यह शब्द आने से मलयागिर पर्वत के विशेषण के रूप में माना जा सकता है ।

इन्द्रपुर ब्रह्मपुर नागपुर सिवपुर ।
परमपुर सांई ऊपरि पार ।
राजा सरग सातमै रतनौ ।
मिळियौ जोत सरूप मझार ॥ ७०

शब्दार्थ— परमपुर – विष्णुलोक सांई – तक ऊपरि – ऊपर पार – पावे सरग – स्वर्ग मिळियौ – मिल गया लीन हो गया जोत सरूप – ज्योतिस्वरूप ब्रह्म मझार – में ।

भावार्थ— इन्द्रलोक ब्रह्मलोक नागलोक शिवलोक विष्णुलोक से भी ऊपर तक पहुँच कर सातवें स्वर्ग में राजा रतनसिंह परम ब्रह्म में लीन हो गया ।

विशेष— युद्ध में वीर गति प्राप्त करने वाले योद्धाओं को अलग-अलग महत्व देने की परिपाटी राजस्थानी वीर काव्य में है । इसलिये किसी योद्धा को सतीपुर में किसी को अप्सरालोक में किसी को बैकुंठ में स्थान दिया है पर जिस योद्धा को सर्वोपरि महत्व दिया है उसे ज्योतिस्वरूप ब्रह्म में लीन कर दिया है । उदाहरणार्थ—हरनाथसिंह का पुत्र कुशालसिंह (भाउवा) और रियां ठाकुर शेरसिंह के बीच युद्ध हुआ दोनों वीरगति को प्राप्त हुए पर शेरसिंह अपनी अधम बद्धता के लिए मरा था इसलिये कवि ने दोनों का वर्णन निम्न प्रकार से किया है—

हुए रो सती संग सतीपुर हालियो
माहिड़ो शेर अम जोत मांही ।

रयणि भुजावळ ग्राफळ रतनौ ।
सारां चढ़ि नीवड़ असमांण ।
जांमण मरण तणौ लगि चिहूं जुग ।
भागौ फेरौ कविलै भांण ॥ ७१

शब्दार्थ— रयणि – पृथ्वी पर, भुजावळ – बाहुबल ग्राफळ – युद्ध कर के रतनौ – रतनसिंह सारां चढ़ि – शस्त्रों के आघात झेल कर, नीवड़ – निवृत्ति प्राप्त कर के असमांण – ब्रह्मांड जांमण – जन्म मरण – मृत्यु, लगि चिहूं जुग – जो चारों युगों में लगा हुआ है भागौ फेरौ – संसार में आवागमन का चक्र समाप्त हो गया कविलै – कैवल्य ज्ञान मोक्ष ।

भावार्थ— पृथ्वी पर अपने बाहुबल से युद्ध कर के तथा शस्त्रों के प्रहार के द्वारा इस जीवन से मुक्ति प्राप्त कर चारों युगों के आवागमन के चक्र को नष्ट कर के वह ब्रह्मांड में मोक्ष को प्राप्त हो गया ।

विशेष— राजस्थानी में आकाश का पर्यायवाची 'ब्रह्मांड' भी है इसलिये कवि ने ब्रह्मांड के लिये असमांण' शब्द का प्रयोग दूसरी पंक्ति में किया है । चौदह लोक के समूह को ब्रह्मांड कहते हैं और ये चौदह लोक शून्य (आकाश) में ही हैं । 'चारों युगों' से यहां तात्पर्य सतयुग द्वापर त्रेता और कलियुग से है ।

खाफर घड सु साहे खांडो ।
रावां धाड कनवजे राव ।
रिणि चढ़ि अचळ मेर ध्रू रतनौ ।
जुग जासी पिण नांम न जाय ।। ७२

शब्दार्थ — खाफर – मुसलमान घड – सेना साहे – मार कर रावां धाड – रावों की मदद करने वाला कनवजें राव – राठौड़ रिणि – युद्ध अचळ – स्थिर ध्रू – ध्रुव जुग – युग जासी – जायेंगे पिण – परन्तु ।

भावार्थ— मुसलमानों की सेना का अपने खांडे से संहार करने वाला रावों की मदद करने में समर्थ राठौड़ राव रतनसिंह यह युद्ध कर के सुमेरु पर्वत तथा ध्रुव के समान अपनी कीर्ति को अचल कर गया। कई युग पृथ्वी पर आकर चले जायेंगे पर उसका नाम इस संसार से कभी नहीं जायेगा ।

विशेष— प्राचीन राजस्थानी काव्य में 'धाड' शब्द त्राहि त्राहि की पुकार आर्तनाद रक्षा चाह विपत्ति चुगली करने वाला आदि के लिये भी प्रयुक्त हुआ है पर यहां मदद अथवा रक्षा करने वाले से अर्थ है ।

इति रतनसी खींवा उतावत री वेलि संपूरण ।

परिशिष्ट

नाह विभूह रतनसा माहै सवि मारग रिण थंच थरै।
भाचम फेरै थड़ा कावमी इठिमन परसी सूर हरै।।

चमचक पोम होम भाराथ रव पुरि मिहूर रहिर परनाळ।
विपरति बति रतनै प्रतपालै मिहूं थड़ा पग्गी बिकराळ।।

माल सबा मटतीस माजीनै भरपुर बाय निहाह प्रवै।
मीरोहर नर भाट बूंबरिक हुस हापळ विहि मगति हुवै।।

वाहि हाय हुवै हयनाह्न भोक भणी सिर फूटै भंभि।
वीवणि वीर विन्हे समभारै दू भमिया घारै रिण बंभि।।

चुभ पारवि रमतै भोभा रवि काळा भाट बणाथळ वेम।
बापर पड रतनी पेड़ेचो मिजड़े बाघां मिळिया वेम।।

तूटै हार मयार तुरंगम पहूटति मांम मनंव पड़ी।
कमधज रतनै स्यूं विपनामिणि भाचरि चवरंम पलंपि चड़ी।।

चोर्म प्रमळ सबळ बळ भूप बळ बीच बीच मुख बीणि बखाखि।
रीमि चपि सेज रतन स्यूं रमतां साथ थड़ा मनियो सुरतांखि।।

रिणघट पाव चमीघट रतनै चाए मनावे मीर पड़ाह।
मोहा लियै तोड़िया सारे कांधू बाछख कमधण नड़ाह।।

बार समाह प्रसिद्ध प्रसटिया नामी सिंधुरी मुख नारि।
भिड़ मदन नह बिरह मोभियो रतनै बापूर्ड भरतारि।।

रुन गय हय बड़ मसटी रतनै बाचर दूं पित बूभे धीनि।
नापरि मसुरि पड़र बबरिया रुधिर सिपोळ तंबाळ रगि।।

रमि रस बळस घति बति रतनै बंध बय धंध घुमाघुमो।
बडमिहुव हुमी बेड़ेचो डुगर पड़ा तपसीन हुवो।।

काव मुखी सारा मति कामति मिछवारी मिय भीव बर।
हुळियै रयण डोळियै बोर्ग नोह ठणा बाजै सहर।

मांम विमळ जिया मन मेळ घटि घटि माळप विपन चड़ी।
रंग पलग पौन्यिो रतनी चमरंग बाग कुमारि चड़ी।।

प्रीतम मीर तणी मव पीणुक बबक विमन ठणी बीमाह।
रहिमी विषै वन्मह्व रतनी म्रस्म मिवर रिसु चंवरी माह।।

राचि बक परणिमी रतनी बड मड ऊरि तुठ चूमी
हाट करम पोमावि हमूरे, हाम मेढाथे मुबस हुमी।।

साहड़े थणे वड़ते सीहौ
क्रम वाहै पुहतो कुसळ ॥ १
खाग झळा[१] माथै सोमावत
तै प्रवाहै निभय[२] तण
वाहै घमण[३] सुहड़ वड़ाड़े
रायपुरे खाडीयौ रण ॥ २
सीहौ सम[८] सामर्थ[६] रतनसी
सोमझि यूं बीठौ सकस[७] ।
मसीयै लांछण वका भेसवी
ऊमरीम गिणीयौ प्रघस[९] ॥ ३

गीत

रावतभट तणै भरोसै रतनै
इम कहीयौ मुरधरा धणी[१]
भड़ आपणौ धरा झळ[३] धारां
ध्रवै[२] नही ताम किसा धणी ॥ १
खाप्पर[४] भड़ां सिरिस खेड़ेचै
भट भाफळीयौ लोह वणे
धरती तिका रयण धणियापी[५]
तिका न छांडो खमतणे ॥ २
धरती नीयम वणी आभाहर[६]
बड रावत नहु गयौ विदेस
जिण मोपनौ रयण भर भामक
नवसहसी[८] तिण रहीयौ नेस[९] ॥ ३

सुभट नीवत सोढा का नाम सुरसमों बीकमसी का पुत्र [१]निर्भय [१]पै [२]रायपुर का शासक [८]मनु [९]मारते युद्ध में योद्धा [१]नाम वसा गर्व ग्रमियत्व [२]सेना [१]युद्ध तलवारों से युद्ध करे [१]मुसलमान सिर पर [१] राठौड़ युद्ध किया [१][२]राव रतन- सिंह [२]अधिकार में की [१][१]राव बोभा का वंशज [१] पैदा हुआ [८]राठौड़ [९]स्थान ।

गीत

जिके कायिम सुपह कातिमस भमजड़ा[१]
भू जिसा भड़ग मै सेर मेहु मेघड़ा[२]
फसे भूपाण केकाण येह वकड़ा
खाग[३] ग्रहे रतनसी दुवारि मुगलां खड़ा ॥ १
थाहि कोवड़[४] वरियांम वहु यै वला
ऊलटै असस वज[५] धालीया धामला
नवांकोटां[६] गढ़ां रयण राखण कळा[७]
ऊठि खेमाल रा अभग भाचामळा[८] ॥ २
खाग ऊनागीयां[९] रीठ[१०] मातौ खळ[११]
वाहतो सार वहमंड लगि विलुकळ[१२]
भड़ां पतिसाह री थीव रतनौ वळै
ऊवहर[१३] तिलक सुरथान गौ[१४] भ्राफळे[१५] ॥ ३

गीत सोरठियो

सिधड़ी पारकर सांमा[१] प्रसिद्ध समंदां पार ।
रूपक देस विदेस रतना वाचीयै वड़वार[२] ॥ १
पागुरण[३] जिण सड पांन पहुरे भूपि[४] राधे पांन ।
गीतड़ा तिण भोम भावे रतनसी राजांन ॥ २
गुजरात पहु ऊतराध पूरब मिरत दखिण नरेस ।
निज कीरती खेमाळ[५] नंदण वापरी[६] वड देस ॥ ३

गीत

खुरसांणी भड़ां सरस सीमावत[१]
सद तिण रयण थई नौसारि

समयान पहिच [१]वेपड़क तर्फ़ेउ [२]तलवार धनुष श्रेष्ठ [४]घोड़ा [६]मारवाड़ कीर्ति युद्ध तलवार नंगी कर के [११]युद्ध [९] दुश्मनों पर [५]प्रति पक्ष [६]ह्ण का बचाव यया [८]युद्ध कर के [१४]तरफ [१] पर [११]बड़े योद्धों पर बरस [३]तलवार मंडराय [२]सीसरों का युग [११]कमी [१०]मुसलमानों की सेना [४]सीसरवें का युग ।

प्रण विढ़ीया[1] गढ़ म वीर्यं ऊदा
दूदे दीधा धरम दुआरि ॥ १
ईसर करण बोलतो प्रघळा[2]
बीरत तबे गया वहवाट
रौद्र[3] घड़ा साहमो[4] रतनसी
मिळीयो धावे मोह मराट[5] ॥ २
जग ऊजाळी करे[6] जैतारण
सिर सूं दीधी सेम सुजाय
ऊभो मेले दुरंग[1] आपरो
जैमल तो मिम रयण न जाय[2] ॥ ३

गीत

रिण विढ़ीयो[1] हेक रतनसी स्वां
दूर्गा वळ[2] हि न आयो वाय
मुगले ढ़ढ़ीयो[3] राव मालदे
रावत सगळां[4] ढ़ढ़ीया राय ॥ १
पाछो आवी खूणे पसी
दोनी हरा म दीधो दौड़
रिणमल पूंडा वीरम रावत
रतन मरण ढ़ढ़ीया राठौड़ ॥ २
लांड राव मूभो लीबावत
हिव मागि सबूटसी हीया
गरय[5] ठीक सीया गांबावत[11]
जमभज हुता तिसा कीया ॥ ३

[1] बिना युद्ध किए मेड़तिया राव दूदा ने बताया [2] टहा इस किलाओं में मुसलमान [3] सामने [4] प्रचंड तापवाला [5] दुनिया में उज्ज्वल कीर्ति फैला कर [6] दुर्ग [1] जयमल मेड़तिया [2] यह गीत यदि मे रतनसिंह को मेड़तिया भाइयों ने बढ़ कर बताने के लिए लिखा है। [1] युद्ध मे काम आया [2] युद्ध [3] दहित किया [4] सभी का [5] इष्ट [11] राव गांगा का वंशज।

राजस्थानी वीररसात्मक वेलि साहित्य

प्रो० नरेन्द्र भानावत

राजस्थानी वेलि साहित्य प्रधानतः तीन धाराओं में बह कर बहा है—चारणी वेलि साहित्य, जैन वेलि साहित्य और लौकिक वेलि साहित्य। चारणी वेलि साहित्य के दो रूप हैं—ऐतिहासिक और धार्मिक-पौराणिक। जैन वेलि साहित्य के तीन रूप हैं—ऐतिहासिक कथात्मक और उपदेशात्मक। लौकिक वेलि साहित्य के भी तीन रूप हैं—ऐतिहासिक, स्तुतिपरक और नीतिपरक। इनमें वीर रस का परिपाक प्रधानतः ऐतिहासिक चारणी वेलि साहित्य में हुआ है। सहायक रस के रूप में वीर रस कतिपय जैन तथा लौकिक वेलि साहित्य में भी मिलता है।

अंगीरस के रूप में वीर रस निम्नलिखित वेलियों में आया है—

रचना	रचनाकार	रचना-संवत
(१) देईदास जैतावत री वेल	आसो भारौत	सं. १६११ के आसपास
(२) रतनसी खींवावत री वेल	दूदो विसराल	सं. १६१४ के आसपास
(३) राजसिंह री वेल	रामा सांदू	सं. १६१६ के आसपास
(४) चांदाजी री वेल	बीठू मेहा दूसलाणी	सं. १६२४ के बाद
(५) रायसिंह री वेल	सांदू माला	सं. १६६१ के आसपास
(६) राव रतन री वेल	कल्याणदास महडू	सं. १६४८-८८ के मध्य
(७) सूरसिंह री वेल	गाडण चोमी	सं. १६७२
(८) अनोपसिंह री वेल	गाडण वीरभाण	सं. १७२६ से पूर्व
(९) वीर सिंह चरित्र वेलि	मान उद्योत	सं. १८ ई. के आसपास

सहायक रस के रूप में वीर रस निम्नलिखित वेलियों में आया है—

रचना	रचनाकार	रचना-संवत
(१) रामदेवजी री वेल	मन हरजी भाटी	१५ वीं शती का उत्तरार्द्ध
(२) म्याले री वेल	मन हरजी भाटी	
(३) तोलादे री वेल	—	
(४) मलार री वेल	तेजो	१५ वीं शती का मध्य

अममस की सम्मिलित सेना को भी (देवीदास ने) पराजित किया था।[1] देवीदास का व्यक्तित्व बड़ा जबरदस्त था। कवि ने बार-बार उसे "धर्मराज अभिनवो"[2] कहा है। उसे देख कर वीतसी का भ्रम हो जाता है। वह दल का शृंगार और देस तथा वंश का दीपक है। बादशाही सेना के लिए वह उस सिंह के समान है जिस पर रौद्ररूपी पाखर पड़ी हुई है।[3]

(२) रतनसी खींवावत री वेल— इसका रचयिता दूदो विसराम नाम का कोई कवि है। ११ छन्दों की इस रचना में एक ऐतिहासिक घटना—हाजीखां का पलायन तथा जैतारण पतन का वर्णन है। अकबर बादशाह ने मेरवाड़ के सेनापति हाजीखां (जिसने अजमेर पर अधिकार कर रखा था) का दमन करने के लिए एक सेना भेजी। हाजीखां डर कर गुजरात की तरफ भाग गया और मुगल सेना ने जैतारण पर अपना फौजी अधिकार कर लिया। जैतारण की इस लड़ाई में राठौड़ रतनसिंह खींवावत राठौड़ किशनसिंह जैतसिहोत आदि सरदार मारे गये।[4]

वेलिकार ने जैतारण के युद्ध-वर्णन में विषकन्या का विराट सामरूपक बांधा है। मुगल सेना रूपी कुमारी को—जो अपने पूर्ण यौवन पर है—दुल्हिन बना कर तथा राठौड़ रतनसिंह खींवावत को दूल्हा बना कर कवि ने पाणिग्रहण संस्कार की मर्यादा का पूर्ण निर्वाह किया है। अन्त में युद्ध रूपी काम क्रीड़ा-रत रतनसिंह मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

मुगल सेना रूपी विषकन्या का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है कि यह कामदेव के समान मदवाली है। उसमें विवाह करने का उत्साह भरा हुआ है। वह नगाड़ों की गड़गड़ाहट के साथ मदमस्त हो जब चलने लगती है तब उसका यौवन उफनने लगता है—

राग कमीस घूमतो रमणी
चूकती मदन महारस चोळ।
हाथी पड मीमाण हुवाए
दिए पाखर करि मैवर मीट ॥ ६

मिळि जैमिल रांण कल्याण मेड़तै भागू च ईहगा बिरद भल।
बळ दाखियो तुहारे बोले सिंह ठाकुरे जैत तण ॥ ११

धर्मराज बसाही के मूल संस्थापक थे। राव रिणमल का पौत्र तथा धर्मराज का पुत्र कल्याण हुआ जिसका बेटा जैता हुआ जिससे ये जैतावत कहलाये।

कल्याणह तणउ तुहारौ देता धोड़ न हाले प्रथम धरि।
पाखर रौद्र तणौ पतिसाही अमट पचारण डहिग परि ॥ १०

इसकी हस्तलिखित प्रति अ० सं० ला० बीकानेर (ग्रन्थांक ६) में है।

[5] जोधपुर राज्य का इतिहास—प्रथम खण्ड गौरीशंकर हीराचन्द ओझा पृ० ३२१-२२।

हाथी घोड़ों का आडम्बर उसके घूंघट का घेरा है। हाजीखां उसके आतंक से कांप कर गुजरात की ओर भाग गया और अपने दुस्हेपन को सिद्ध न कर सका—

बीरमणी अजमेर बिडारे।
खिसियो खिझमीयो हाजीखान ॥ ६

पाणिग्रहण संस्कार को यों बिगड़ता देख कर युगल सेनारूपी युवती विषम गति से जैतारण की ओर आई। उसने सोलह सौ हूंगे शृंगार सजे। तीक्ष्ण भालों की अणी ही उसके नाखून थे और तेज चमचमाते हुए कुन्त ही कटाक्ष थे। दुश्मनों की सेना को नष्ट करने वाले आयुध ही उसने लिए सप्त सात्व हार थे। इसी रूप पर मोहित होकर रतनसिंह ने धीधा अपने वासी तोपों के बज्र नैनों से प्रणाम के इशारे किये तलवार के रूप में कुसुमायुध के पंचशरों का संधान किया सेना की हुंकारों के मंगल गीतों के बीच सिर पर मौड़ धारण किया और मन में रत होने का अनुराग लेकर कृपाण की मेखला बांधे विवाह के नगाड़े बजवाये।[1]

पाखरों की पायल पहने कराभालों का कंकण धारण किये खड्ग बिराह की कंचुकी और कवच की साड़ी लपेटे नयनों के कटाक्ष बाण छोड़ती हुई, कवच कड़ियों को झकझोरती हुई घूमर नृत्य करती हुई, बत्तीस लक्षणों से युक्त युगल सेना रूपी विषकन्या रतनसिंह का वरण करने के लिए आगे बढ़ी।[2] उसने लोहे का संदूक बांधा और तलवार से पाणिग्रहण किया। जैतारण के युद्ध में चमकती हुई तलवारों से तोरण बांधने की रस्म

विकट अणी मत कुत मचारे, भुजि भड़का भाला भालोड़।
लाफर फौज पाखरी वड़िया जैतारिणि ऊपरि पंथ चोड़ ॥ १७

अरियद कुण सुवासव मायख सोळह कुणि सजे सिणगार।
कुंत नयाण धुरी कायोली ममरूपी धुरिय घड़े चमत्कार ॥ १८

तीखण असण तण चमण नयण सिव धनप मयण सर पंच सुरूप।
रूप कियौ तो मोपरि रतनै रिम बड़ि मौड़ तेपड़ तस रूप ॥ १९

भति दिन लगन महूरति ऊगड़ि चपळ मपळ दळ हुकळि मौड़।
मीर वडा परणण कुमारी मार रैणि बांधीयौ मौड़ ॥ २०

मन लग राप बधामण मीमा कटि मेखळ बत्तीस कुरवाण।
भावी मीर वडा मोपड़ाबो मिळसिते भेचरि मीसाण ॥ २१

पाखर चोर कासली पायलि कामण हायम चूड़ि कसि।
मीर जरद पाखर चनाडरिग भाव सिणह जड़ाव करि ॥

[2] नयरा कमाल बैंग मीलरतै कसि बिहु बिसि फेरली कड़ा।
उठि रमण परणीवा आई घूमर बीचै मीर वडा ॥ २६

पूरी की[1] तो हाथी-दाँतों के रूप में हँसती हुई मुगल सेना की विष-कन्या ने अपनी प्रसन्नता प्रकट की। योद्धाओं के मरने से अंगरहित अर्थात् अनंग होकर वह कामार्त हो उठी।

रावतों का सरदार रतनसिंह उसी दिन से सचमुच दूल्हा बना। उसका मौड़ आकाश के लिए स्वयंवर बन गया।[1] किले के लिए कौस्तुभरूप किसनसिंह यशस्वी बराती सिद्ध हुआ।[2] हास रूपी थाल में भाल रूपी अक्षतों से रतनसिंह को बधाया गया। युद्धस्थल रूपी सेज पर गलबांही देकर रतनसिंह ने मीर कुमारी के साथ आनंद भोग भोगा।[3]

विधिवत् सभी वैवाहिक रस्में पूरी की गईं। शत्रुओं का शिरोच्छेदन करना ही कलश उतारना है। अत्यन्त गंभीर घावों को सहना ही मुँह दिखाना है। मित्रों के पक्षों का फैलना ही छत्र चंवरों का सजना है। तलवारों की मुठभेड़ से रुधिर के परनालों का बहना ही सिन्दूर का छिटकना है। छत्तीस प्रकार के शस्त्रों का सचरण ही छत्तीस प्रकार के व्यंजनों का रसास्वादन है। दोनों सेनाओं का परस्पर युद्ध करना ही वर-वधू का जुआ खेलना है।[1]

वर-वधू का समागम भी बड़ा विचित्र है। क्षत्रियत्व की रक्षा करने वाले रतनसिंह ने तलवारों के प्रहारों से मीर-सेना रूपी युवती की कंचुकी के कसने तोड़-तोड़ कर उसे रति क्रीड़ा में परिमग्न कर दिया। वह बेचारी अस्त-व्यस्त वस्त्रों को लेकर या छिपी। रतन सिंह मुगल सेना रूपी विपरकामिनी के साथ समोग-सुख में इतना तल्लीन हो गया कि उसके टुकड़े-टुकड़े हो गये। हाड़ मांस और रक्त चारों ओर फैल गया। गृध्र, डाकणियां भूत प्रेत आदि इकट्ठे होकर आनन्द के साथ इनका भक्षण करने लगे। रतनसिंह ने वीरों को खंड-खंड कर, हाथियों को मार-मार कर इतना रक्त प्रवाहित किया कि सभी उसे पीकर तृप्त हो गये। वह इस संसार में अब नहीं रहा। वह तो मर कर स्वर्गलोक का स्वामी बन गया। देवता रतनसिंह को आशीर्वाद दे रहे हैं। अप्सराओं और सतियों की आत्माओं के

मंड है चिमण सेहरा कामणि कर मेवार माती चिरिमाळि।
हूरी डाल देखि ळळकती तोरणि वैतारिणि रिणि ताळि ॥ २७

रावत वीद नरिंद रतनसी चिरत देति वीदवणि।
मौड़ मुकटि सिरि टोप माडीयै सन्मै मोळिमी अभिमनि ॥

काळा कोटि दुवाहा कमधजि किसन भणवर रयण कन्है।

उरीमण पाळ भावय मावै पति अवाहुला हाथळे भनीर।
भळके चमै उनमै मामे बनाविदं रतनसी वीद ॥ ११

[2] कसण सवण रतनसी वर्मगळि माण गळोपमि वीण रहै।
मह आरति उवारे वरि, वरमाळा फिरिमाळ वहै ॥ १४

[3] देखिये छन्द संख्या १५ से ४४।

रिखपट बाम सभीवटि रतनै चाह मनाई मीर बड़ा।
सोहा वीमै तोड़ीया मारै काचू चोसरा कसणा कड़ा ॥ ४

साथ रमण करता हुआ वह बैकुंठ मे निवास कर रहा है। भाला अब भी उसके हाथ में वीरता का उद्‌घोष कर रहा है।

(३) **उदयसिंह री वेल** —इसके रचयिता रामा सांदू उदयपुर के महाराणा उदयसिंह के समकालीन थे। इसमे वेलिकार ने १२ छन्दों में उदयसिंह की ही प्रशंसा की है। कवि के अनुसार उदयसिंह का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावक है।[3] यह धर्मशास्त्रों का ज्ञाता विष्णु का परम भक्त और काव्यानुरागी है। उसकी वाणी वैरियों के लिए भी सरस है। स्वामि भक्ति मे वह वट वृक्ष की तरह दृढ है।[4] आश्रित जनों के लिए अभय-अन्न स्वरूप है। उसकी वृत्ति निर्मल चित्त उत्तम और शरीर पवित्र है। वह छन्दशास्त्र का आचार्य तथा संस्कृत प्राकृत का पंडित है। उसके समान दानी ज्ञानी और अभिमानी इस संसार में दूसरा कौन है? संसार के सभी राजा उसकी सेवा में तत्पर रहते हैं—'सब सेवै भूपत्ते सकल'।

(४) **चांदाजी री वेल**[5]—इसके रचयिता बीठू मेहा दूसनाणी दूसला के पुत्र या वंशज थे। इसमे राव मालदेव के यशस्वी सरदार तथा मेड़ता के राव वीरमदेवजी के चतुर्थ पुत्र चांदाजी के वीर व्यक्तित्व की गौरव-गाथा गाई गई है। ऐतिहासिक दृष्टि से इस कृति का बड़ा महत्त्व है। वेलि को पढ़ने से ज्ञात होता है कि चांदाजी ने सोलंकियों के दांत खट्टे किये थे। अपने भाई जगमाल के साथ मिल कर अजैपुर (अजमेर) और रायपुर पर एक दिन में अधिकार किया था।[6] फलोधी के रणक्षेत्र में भाटियों का भ्रम दूर भगाया था। गुजरात की सेना का मद मिट्टी मे मिला दिया था। चित्तौड़ के रणक्षेत्र मे सुल्तान बादशाह की सेना का दमन किया था। मेड़ता के मलिकखान के साथ दो माह तक युद्ध

रम झकोळ जिचाळह रतनी आतम अरेस सतीयां जिमअंत।
भूअर भळहळ्ळ कुंभारे, करहणी वसीयउ वैकुंठ॥ ९

इसकी हस्तलिखित प्रति अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर (ग्रंथांक ११६) में है।

[3] ऊजम मग अगाहि भजन जिम प्रासति पौहवि न कोई एम नृपह।
एकाएक अजब एकाणवि चिंत तणा परिकार सहि॥ १
सूरति सत सील साच अमसाज विसन भगति अधिकार विमेक।
रूपक राय रावअट रांणी उदयसिंघ दताणी एक॥ २

[4] भावे तन अतीन मूक अमचर, वैरी है सरसी वयण।
धू साहवट तणी सामाध्रम भूपन की मनि नर मुकरख॥ ६

[5] इसकी हस्तलिखित प्रति मोतीचंद खजांची बीकानेर के संग्रहालय में है।

पहसोड़ सोलंखिया चाय पीहती निरमय चंद दाखीयै नेत।
मागौ ते कीसणाहर भिड़ते चाडा पाणि धणहटै खेत॥ २

[6] बोडै बीह अजैपुर बांपहि असुर घणा रायपुर उथाढ़ि।
एकै दीह उभै भाखाडा बीता वर अमै बपमाति॥ ४

सम्पन्न किया था।[1] मामीर के खान (दौलत खां) के साथ मुकाबला कर भाटा ने अपनी वीरता प्रदर्शित की। इस लड़ाई में नरसिंह सूरसिंह कान्हा रूपा भला धीरावत आदि भी बहादुरी से लड़े।

(२) रायसिंघ री वेल[1]—अनुमान है कि इसके रचयिता चांदूभाला रहे हों। ४१ छन्दों की इस रचना में बीकानेर के महाराजा रायसिंह के बचपन और यौवन के साहसपूर्ण कार्यों का वर्णन किया गया है। जिस अवस्था में अन्य राजकुमार कौड़ियों का खेल खेलते है, उस अवस्था में (बाल्यावस्था में) रायसिंह ने मुगल दरबार तक अपनी विजय-दुंदुभी बजवायी।[2] सात वर्ष की अवस्था में उसका प्रभाव सातों द्वीपों पर्यन्त फैल गया तो आठवें वर्ष के प्रवेश ने उसे प्रसिद्धि का पात्र बना दिया। नववें वर्ष का तेज पृथ्वी के नवों खण्डों पर छा गया तो दसवें वर्ष ने उसके साम्राज्य का विस्तार कर दिया।[3] दिल्लीनाथ अकबर तक उसकी प्रभाव गरिमा व्याप्त हो गई। बड़े बड़े राजाओं का गर्व चूर हो गया और उसके अश्व पर चढ़ते ही पृथ्वी की मर्यादा टूट गई। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में तो वह सुरताण की सेना से जा भिड़ा।[4]

वेलिकार ने बादशाह अकबर से रायसिंह की नाराजगी और गुजरात की लड़ाइयों की ओर भी संकेत किया है।

(३) राव रतन री वेल[5]—इसके रचयिता कल्याणदास मेहडू शाखा के चारण डिंगल के प्रसिद्ध कवि जाडा मेहडू के पुत्र थे। ये जोधपुर के महाराजा गजसिंह के कृपा-पात्रों में से थे। १२१ छन्दों की इस रचना में बूंदी के राजाओं की वंशावली (देवीसिंह से लेकर चरित नायक रतनसिंह तक) आरम्भ में देकर रतनसिंह की गुणगाथा गाई गई है। वह भीम के समान वीर, कर्ण के समान दानी तथा विक्रम के समान दयालु था। शारीरिक पराक्रम में भी वह किसी से पीछे न था। कमरपने में ही काशी के समीप बरणागिर स्थान पर उसने

साह रै महल मेड़ती मचीयो अमल कटक भेभे असिमान।
भोगमणि भारी गह भारी धार धणी जोधै मरिमान॥ ६

[1] इसकी हस्तप्रति अनूप सं० ला० बीकानेर, (ग्रंथांक १२९ (क) में सुरक्षित है।

[2] जिण वेस प्रवेस करे रायजादा अजकी महिमा करण।
खेल खेल सुरताण खरीता राखे दीना सबा रिण॥ २

[3] सतदीप रायमल बरस सातमैं परगट सुजस आठमैं प्रवेस।
नवमैं बरस नवखंडीयो नवबाद दसमैं बरस बधे देस॥ ३

[4] रायकुमार राजधन रतन रायसल सुरताणी फौजां सरस।
अमरस भड़ा माहे आडी आगीयो पनरहमै बरस॥ ६

[5] इसकी हस्तलिखित प्रति साहित्य संस्थान उदयपुर में है।

मार्तंम कमठ सिर मांझा मोटा पड़ीया फण माळा पास।
माहणोके बम भर बिना वणीया तरण धमी मी बास ॥
पखिहारि सकति मात्री उमापति करिया कमठ माळ पै काम।
नम पति मद्धर हूर तिखि गदि पै वरण मरण मळ तट मैं बाम ॥"

(७) सूरसिंघ री वेल —इसके रचयिता गाडण चोला (जिसे चौथजी भी कहा जाता है) सूरसिंह के राज्याश्रय में थे। ११ छन्दों की इस रचना में सूरसिंह के पूर्वजों का वर्णन कर विविध उपमानों के साथ सूरसिंह (बीकानेर के महाराजा) की अन्य राजाओं के साथ तुलना की गई है जिसके कतिपय अंश इस प्रकार हैं—

(१) मयद्दट मवर पह इन घर गिरयन मेर महण मस सुरजमास।
(२) नरपति मवर चोवतां मसमरि, सूर विरद मण सहस-फण।
(३) प्रथिपति मवर मदार ईखता वेर सुपह जित सागर चीर।
(४) मळ नदि मवर मवर नर नामसि मपि सुरजमस मग मळ।
(५) तार कपीर काच मन भूपति हेम हीर नम चेतहर।
(६) संघार मसाप बार पारिख सुघ फेर पर्ख चोवता फेर।
पह कमठंस वंस पह बीजा सुर मरल बग ताम सेर ॥
(७) पख बग संघ बीजा बीजा पह सूरपक है समस सुघ ॥

(८) अनोपसिंघ री वेल —इसके रचयिता गाडण वीरभाण बीकानेर के महाराजा चरित्रनायक अनूपसिंह के समकालीन थे। ४१ छन्दो की इस रचना में अनूपसिंह की कीर्ति गाथा तथा आदिनारायण से लेकर अनूपसिंह (काव्यनायक) तक की वंशावली वर्णित है। कवि के कथनानुसार अनूपसिंह अमिट त्यागी और तलवार का धनी है।[3] उसका तपोयुक्त व्यक्तित्व सूर्य की तरह है जिसके उदित होते ही शत्रुरूपी तारे अस्तित्वरहित हो जाते हैं। वह याचकों के लिए आश्रयस्थल[4] एवं कवि रूपी चकवों के लिए किरणमाल है।[5] प्रतिज्ञा-पालन में पांडवों की तरह गति और शत्रु-विनाश में हनुमान की तरह सत्य में गति गोरख की तरह और सत्यवादिता में युधिष्ठिर की तरह है। रिपुओं के सम्मुख वह समुद्र की तरह प्रशान्त और गंभीर है तो अपने प्रभाव प्रभुत्व में हिमालय की तरह उन्नत। वह अनाथों का नाथ तथा निर्बलों का बल है।[6]

इसकी हस्त प्रति अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर (ग्रन्थांक १२६) में है।
इसकी हस्त प्रति अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर (ग्रन्थांक १२६) में है।
[3] मानो इमद त्याग मिट ईसा तिजड़ साहिये कपण तण।
उरियी वेम मरक बळे बस भोपम उडिण भरहर भाखि भंडार।
[4] जाचक आश्रम साहिये जड़ जप।
[5] कवि चकवा नै किरणाळ।
पडु पमे करवे पारथ पिसा पहु चि हणु किलै बसि पात।
गति गोरख युधिष्ठिर सत बीहा इसवर बचण हि रन बड़ हाप।
* सहणा सामरा सपेखित सायर, अणभाई परमत अधिकार ॥
[6] मागण मनाथ भर निबळा बळ कवर।

(२) वीर जिन चरित्र वेलि[1]—इसके रचयिता मुनि श्री ज्ञानउद्योत उपाध्याय पुण्यसागर के शिष्य ज्ञानसागर के शिष्य थे। इस रचना में जैनियों के २४वें तीर्थंकर भगवान महावीर के 'वीरत्व' को प्रकट किया गया है। दीक्षा लेने के बाद बारह वर्ष तक छद्मावस्था में रह कर महावीर ने तपश्चरण काल में विभिन्न उपसर्गों एवं परीषहों का[2] समभाव पूर्वक सामना किया था। आत्मा की यही वीरता प्रदर्शित करना कवि का उद्देश्य रहा है।

उपर्युक्त जिन आलोच्य ९ वेलियों में वीर रसात्मक भावनाओं का संचरण हुआ है। उनमें 'रतनसी खींवावत री वेल' तथा 'राव रतन री वेल' ही विशेष रूप से उल्लेखनीय है। शेष वेलियों में वीर रस का प्रसार प्रशस्ति तक ही सामान्यतः सीमित रहा है। विस्तार भय से सहायक रस रूप में वीर-रस जिन वेलियों में प्रयुक्त हुआ है उनका उल्लेख भर किया जा सका है।

इसकी हस्तलिखित प्रति अभय जैन ग्रंथालय बीकानेर, में है।

(क) वर्षा—आई ध्यान की तारी वन में ठाढ़ उपसर्गधारी।
मेघ घटा चढ़ी आई, पवन की झकोर झूमे झड़लाई।
झरमार पौन झकोर चिहुँदिसि दमक दामें दामिनी।
दादुर चातुक मोर रव में पीरी विरही कामिनी।
गिरी सभी खीरा रही धीरी जलद परीसह सबि सहै।
धारा धरी धरो महो मुनिवर धम्म ध्यान धरि, अचल सुमेर नवि रहै।

(ख) शीत—हिम शीत काल भीत भवठो आनु बाह भुगता।
हिम पडत झार झारे झोरे हरित बन जिम झागरा।
बरन भून नगन नवीन तरणी तूमीरा पग धारे।
तिण समे वन गिरी शीत देखें स्वामी अडापड़ गुण धरे॥

(ग) ग्रीष्म ग्रिन वासि भर अति ताप तडका लूव फागें मृग तरणा।
मर बालो धूप निजाण नदियां सूखर दीम धनि धरा॥
पवन [illegible] मगन चलन ममक बन धान्न।
तिण समे जिनवर धीमत गुणधर ध्यान धारे धार धर॥
इम तब बाल जिसम परीसह भूमि परिसम गणी।
इन्हां इन पंच बाँउन निरामी धन्नीपही।

राजस्थानी वेलि साहित्य की सूची

प्रो नरेन्द्र भानावत

क्रम संख्या	रचना-नाम	रचनाकार	रचना-काल
१	राउल बेल	रोडा	११वीं शती के लगभग
२	रामदेवजी री बेल	संत हरजी भाटी	१५वीं शती का उत्तरार्द्ध
३	रूपादे री बेल	"	"
४	तोलादे री बेल	—	"
५	दलारे री बेल	देवो	१५वीं शती का अन्त
६	कर्मचूर व्रतकथा बेलि	भट्टारक सकलकीर्ति	१६वीं शती का प्रारंभ
७	चिहुंगति बेलि	वाछा	सं १५२ (लिपिकाल)
८	जम्बूस्वामी बेल	सीहा	सं १५१५ (लिपिकाल)
९	रहनेमि बेल	"	"
१	प्रथम जम्बूस्वामी बेलि	"	सं १५४८ (लिपिकाल)
११	पंचेन्द्रिय बेलि	ठकुरसी	सं १५५
१२	नेमिश्वर की बेलि	"	सं १५५ के आसपास
१३	गरभ बेलि	लावण्यसमय	सं १५६१-८९ कॅ मध्य
१४	गरभ बेलि (बहुतबेलि)	सहजसुन्दर	सं १५७०-८२ के मध्य
१५	बेलि	छीहल	सं १५७५-८४ के मध्य
१६	नेमि परमानंद बेलि	जयवल्लभ	सं १५७७ के आसपास
१७	वस्कल चीरकुमार ऋषिराज बेलि	कनक	सं १५८१-१६१२ के मध्य
१८	क्रोध बलि	मतिसार	सं १५८८
१९	सुधर्मस्वामी नी बेलि	वीरचंद	१६वीं शती का अन्त
२	जम्बूस्वामी नी बेलि		"
२१	बाहुबली नी बेलि	"	"
२२	भरतबेलि	देवानंदि	१६वीं शती
२३	आईमाता री बेल	संत सहदेव	स १५०६
२४	चन्दनबाला बेलि	अजितदेव सूरि	सं १५६७-१६२२ के मध्य
२५	सम्यक्त्व बेलि प्रबन्ध	साधुकीर्ति	सं १६१४ के आसपास
२६	गुणठाणा बेलि	जीवन्धर	सं १६११ (लिपिकाल)
२७	लघुबाहुबलि बेलि	शांतिदास	सं १६२५ (लिपिकाल)

६३	सुजस वेलि	कांतिविजय	सं १७४५ के आसपास
६४	संपइ वेलि	बालचंद	सं १७७५
६५	नेमराजुल वेल	चतुरविजय	सं १७७६
६६	नेमिस्नेह वेलि	जिनविजय	—
६७	विक्रम वेलि	मतिकुमार	—
६८	रघुनाथ चरित नवरस वेलि	महेशदास	१८वीं शती का प्रारंभ
६९	प्रतापसिंघ री वेल	चारण वीरभाण	सं १७२६ से पूर्व
७०	वीर गुमानसिंघ री वेल	—	१८वीं शती का अन्त
७१	वीर वेलड़ी	देवीदास	सं १८२४ के आसपास
७२	वीर जिनचरित वेलि	ज्ञानउद्योत	सं १८२५ के आसपास
७३	गुण वेलि	वीरविजय	सं १८३
७४	स्थूलिभद्र नी सीयल वेल		सं १८६२
७५	स्थूलिभद्र कोश्यारस वेलि	माणकविजय	सं १८६७
७६	नेमिश्वर स्नेह वेलि	उत्तमविजय	सं १८७८
७७	सिद्धाचल सिद्ध वेलि		सं १८८५
७८	नेमिनाथ रसवेलि		सं १८८९
७९	नरसावेल	—	सं १९२१ (लिपिकाल)
८०	पदमवेल	—	१९वीं शती (लिपिकाल)
८१	बाबा गुमानभारती री वेल	चिमनजी कविया	१९वीं शती का उत्तरार्द्ध

भव-ई पु [सं] १ शिव महादेव (ना डि को)
[सं भवक] २ मेघ मदन।
[स भवुधि] ३ समुद्र (ध मा)
[सं भवु] ४ जल। उ —नैण नीरज में भव नहं रे, भवा बहि जाती।
—मीरां
५ बलमा। [स भवर] ६ बादल।
[स भाम्र] ७ आम का वृक्ष या उसका फल। उ०—मारगि मारगि भव मौरिया भवि भवि कोकिल प्रलाप।
—वेलि
[सं भंवर] ८ आकाश। ९ वस्त्र।
सं स्त्री [सं भंवा] १ उमा पार्वती। उ —भव हुकम भई भव भराथण सुख-सागर दरसायी है साम।
—भी रा
११ दुर्गा। १२ धरती। १३ शक्ति।
१४ माता जननी। उ भाव कही ती भाप जाद भावू भव भाव दसिवा सती।—वेलि

क्र मे —सत्य सत्य सच सांच।
यौ —सतवादी सतवान।
विलो —झूठ।
३ पुत्र या पति के स्वर्गवास होने पर स्त्री में उसके साथ भस्म होने की शक्ति। उ —मुरातन मुरां चढे सत सतियां सम बोम। भाझी भारां ऊतरै मर्णी भगस नू ताय।—बां दा
४ सती होने की क्रिया या भाव।
उ —डाहरां भोज मार्र सेढू सती होवदा भाई। सत कीयौ भुवी।
—देवजी बगड़ावत री बात
क्रि प्र —करणी होणी।
मुहा —सत मांडणी चढ़णी-पति के मृत शरीर के साथ सती होना।
१ सतीत्व पातिव्रत्य। उ —सती सत छोडे कता सीत।—मो क
क्रि प्र —बमणी जाणी छूटणी बिगड़णी करणी।

श्री लालस का अध्यवसाय । अपने देश की प्राचीन परिस्थितियों में पठित जिस निष्ठा से निरुक्त किया करते थे उसकी कुछ झलक मैंने यहां पाई ।

डॉ. भगवतशरण उपाध्याय

राजस्थानी शोध संस्थान की ओर से राजस्थानी कोश तैयार हो रहा है। एक लाख पच्चीस हजार शब्द संग्रह किये गये हैं। यह प्रयत्न स्तुत्य है, इसे सभी स्वीकार करेंगे।

मैं इसके संपादकों को बधाई देता हूं और इस कार्य के लिए उनकी स्तुति करता हूं।

घनश्यामदास बिड़ला

देवताओं ने समुद्र का मन्थन कर के १४ रत्न निकाले थे। किन्तु भाषा-समुद्र का मंथन कर के उससे शब्द-रत्न निकालना उनको परखना, उनकी बारीकियों को दिखलाना, यह और भी दुष्कर कार्य है। किन्तु श्री सीतारामजी लालस की अनवरत तपस्या और साधना ने इसे भी सम्पन्न कर के दिखला दिया है। यह एक बहुत बड़ा अनुष्ठान है जिसकी सफलता से राजस्थान का मस्तक ऊंचा रहेगा।

श्री सीतारामजी ने इस कोश की भूमिका लिखने में भी बहुत श्रम किया है। प्रस्तावना में उन्होंने राजस्थानी भाषा और व्याकरण के सम्बन्ध में बहुमूल्य सामग्री प्रस्तुत की है। मेरी दृष्टि में राजस्थानी भाषा और साहित्य के इतिहास में इस कोश का ऐतिहासिक महत्व प्राप्त होगा।

डॉ. कन्हैयालाल सहल

अपने ढंग का सर्व प्रथम कोश होने के कारण यह प्रयत्न सर्वथा प्रशंसनीय है। पुराने कवियों के उदाहरण दे कर इस कोश को वस्तुतः महत्वपूर्ण बना दिया है। यह राजस्थानी कोश अच्छा बन गया है और राजस्थानी साहित्य का अध्ययन करने वालों के लिए बहुत ही सहायक और उपयोगी प्रमाणित होगा।

डॉ. रघुवीरसिंह सीतामऊ

इस बड़े और बृहद् कोश को तैयार करने के लिए श्री लालसजी राजस्थानियों के धन्यवाद के पात्र हैं। आशा की जाती है कि प्रत्येक राजस्थानी भाषा-प्रेमी इस कोश के प्रकाशन और प्रचार में भी साधन का सहयोग देना अपना कर्तव्य समझेगा।

इसके परिष्कार में राजस्थान के माननीय विद्वान श्री नित्यानन्दजी शास्त्री के परामर्श से काम में हुए। जो बहुत आवश्यक होती है।

महामहोपाध्याय विश्वेश्वरनाथ रेउ जोधपुर

शोध प्रकाशन परिचय

राजस्थानी भाषा और साहित्य
ले —डॉ हीरालाल माहेश्वरी
प्रकाशक—आधुनिक पुस्तक भवन । ३१ कलाकार स्ट्रीट कलकत्ता—७
मूल्य—१२) ५० पृष्ठ—४१८

यह ग्रंथ लेखक ने पी एच डी की उपाधि के लिए शोध प्रबन्ध के रूप में लिखा है। आलोच्य काल संवत् १५० १६५ तक का लिया गया है। पूरा ग्रंथ दो खण्डों में विभाजित किया गया है। प्रथम खण्ड में राजस्थानी भाषा पर दो अध्याय हैं—१ राजस्थानी भाषा सामान्य परिचय २ बोलियाँ विशेषताएँ ध्वनि-परिवर्तन व्याकरण आदि। द्वितीय खण्ड में १३ अध्याय हैं जो उस काल के राजस्थानी साहित्य पर प्रकाश डालते हैं। अध्याय ३ चारण साहित्य (पृष्ठभूमि व सामान्य परिचय) ४ चारण साहित्य (ऐतिहासिक प्रबन्ध काव्य) ५ चारण साहित्य (ऐतिहासिक मुक्तक काव्य) ६ (क) राष्ट्रीय काव्य धारा के कवि (ख) स्त्री कवि, (ग) कुछ अन्य फुटकर कवि ७ पौराणिक व धार्मिक रचनाएँ ८ लोक साहित्य प्रबन्ध-काव्य ९ लोक साहित्य मुक्तक-काव्य १० जैन साहित्य ११ जन साहित्य—प्रमुख कवि और उनकी रचनाएँ १२ सन्त साहित्य १३ मीरां बाई १४ गद्य साहित्य १५ उपसंहार।

संवत् १५ से १६५ तक का समय राजस्थानी साहित्य के आदिकाल और मध्यकाल के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है जिसमें प्राचीन राजस्थानी ने अपना नया रूप निर्मित किया है। लेखक ने बड़े परिश्रम के साथ हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर विस्तृत शोध की है तथा अनेक नये तथ्यों पर प्रकाश डाला है। कितनी ही अज्ञात डिंगल रचनाओं को भी इस ग्रंथ में स्थान मिला है। विपुल परिमाण में सदर्भ ग्रंथों का प्रयोग करके लेखक ने अपने ग्रंथ को अधिक से अधिक प्रामाणिक बनाने का प्रयत्न भी किया है। मीरां ईसरदास दुरसा आढा राठौड़ पृथ्वीराज आदि इस काल के प्रसिद्ध कवि हैं जिन पर पहले भी काफी काम हो चुका है पर उनके बारे में भी लेखक ने कुछ नई जानकारी और कुछ निर्णय दिये हैं जो पाठक को कई बातों पर मनन करने के लिए बाध्य करते हैं। राजस्थानी साहित्य के काल-विभाजन के सम्बन्ध में भी विस्तार के साथ विचार किया गया है।

राजस्थानी साहित्य के विस्तृत इतिहास-लेखन में इस प्रकार के ग्रंथों का विशेष महत्त्व रहेगा इसमें संदेह नहीं।

—शोध सहायक

राजस्थानी कहावतें
ले —डॉ कन्हैयालाल सहल

प्रकाशक—
बंगाल हिन्दी मंडल—८ इण्डिया एक्सचेंज प्लेस कलकत्ता—१
मूल्य—५) ¤ पृष्ठ—२४४

डॉ कन्हैयालाल सहल राजस्थानी कहावतों के मर्मज्ञ हैं । कुछ वर्षों पहले इस विषय पर उनका शोध प्रबन्ध— राजस्थानी कहावतें एक अध्ययन' प्रकाशित हुआ था जिसमें लेखक ने राजस्थानी कहावतों पर अनेक पहलुओं से विचार किया है । प्रस्तुत पुस्तक में इन्होंने करीब २५ कहावतों का संकलन हिन्दी अर्थ सहित अक्षर क्रम के अनुसार प्रस्तुत किया है । इस ग्रन्थ में इस प्रकार कई विषयों से सम्बन्धित कहावतें आ गई हैं जो यहां के लोगों के संस्कारों और उनके औसत ज्ञान का अच्छा परिचय देती हैं ।

आमुख में विद्वान लेखक ने बड़े परिश्रम से कहावतों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डाला है । वेदों ब्राह्मण-ग्रन्थों उपनिषदों पुराणों रामायण महाभारत योगवाशिष्ठ स्मृतियों चाणक्य सूत्र के अतिरिक्त संस्कृत काव्य तथा पालि प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य की कहावतों का चयन करके इस दिशा में कार्य करने वाले विद्वानों के लिए लेखक ने बहुत महत्त्वपूर्ण पृष्ठभूमि तैयार कर दी है । लगभग ६२ पृष्ठों की भूमिका में इसी प्रकार की ठोस और महत्त्वपूर्ण सामग्री है ।

कहावतों का सही हिन्दी अर्थ करना बड़ा श्रमसाध्य कार्य है पर लेखक ने इस जिम्मेवारी को भी बड़ी निपुणता के साथ निभाया है । राजस्थानी लोक साहित्य व यहां की सामाजिक परिस्थितियों तथा मान्यताओं का अध्ययन करने वाले विद्वानों के लिये यह ग्रंथ बहुत उपयोगी है ।

—शोध सहायक

राजस्थानी शोध संस्थान के कुछ महत्त्वपूर्ण प्रकाशन—

१ लोकगीत—मू १ रु (अप्राप्य)
राजस्थानी लोक गीतों का एक अध्ययन व परिशिष्ट में चुने हुए गीत

२ गोरा हट जा—मू. १ रु. (अप्राप्य)
अंग्रेजी साम्राज्य-विरोधी कविताओं का संकलन ऐतिहासिक टिप्पणियों सहित

३ डिंगल कोष—मू. १२ रु. (अप्राप्य)
डिंगल के प्राचीन पद्य-बद्ध नौ कोषों का संकलन

४ बैठे रा सोरठा—मू १ रु
बैठा सम्बन्धी राजस्थानी व गुजराती सोरठे तथा विवेचन

५ राजस्थानी बात संग्रह—मू ७ रु
राजस्थानी की प्राचीन चुनी हुई बातें तथा विवेचन

६ रसराज—मू १ रु
शृंगार रस-सम्बन्धी राजस्थानी के चुने हुए दोहों का संकलन

७. नीति प्रकाश—मू १ रु.
फारसी के ग्रंथ अखलाक-ए-मोहसनी का प्राचीन राजस्थानी में गद्यानुवाद

८. ऐतिहासिक बातां—मू. १ रु.
मारवाड़ के इतिहास से सम्बन्ध रखने वाली प्राचीन बातें व विवेचन

९. राजस्थानी साहित्य का आदिकाल—मू १ रु
आदिकालीन राजस्थानी साहित्य सम्बन्धी विविध लेख

१ पिंगळ-शिरोमणि—मू १ रु.
छंद-शास्त्र का महत्त्वपूर्ण ग्रंथ

संपादक नारायणसिंह भाटी
प्रकाशक राजस्थानी शोध-संस्थान
रिसाला रोड जोधपुर